फ्राँस की दो आँखें

कैसर के

शासन काल में

जर्मनी को परास्त

करने वाला फ्रांस आज

हिटलर द्वारा पद-दलित

होकर आत्म पराजय

की निर्भीकियाँ ले

रहा है,—कैसे ?

क्यों ?

—राम कृष्ण

भास्कर बुक डिपो,
ज्ञानवापी, बनारस ।

फ्रांस की दो आँखें

लेखक

श्रीरामकृष्ण जी काम

सम्पादक

श्री देवेन्द्र चन्द्र विद्याभास्कर

प्रकाशक

विद्याभास्कर बुक डिपो

ज्ञानवापी

बनारस

प्रोप्राइटर्स
धीरेन्द्र चन्द्र, वीरेन्द्र चन्द्र
विद्याभास्कर बुक डिपो
ज्ञानवापी, बनारस ।

प्रथम संस्करण
५०० प्रति
१५ अप्रैल १९४२ ई०
मूल्य एक रुपया

—पी० घोष द्वारा
सरला प्रेस बाँसफाटक में पृष्ठ ६५ से ११२ पृष्ठ तक मुद्रित

फाँस
की
दो
आँखें

परिचय-पत्र

गत युद्ध जीता गया था, परन्तु वर्तमान की घोषणा के साथ।

क़ैसर के शासनकाल में जर्मनी को परास्त करने वाला फ्राँस, आज हिटलर के द्वारा पद दलित होकर सिसकियां ले रहा है। हम उसी विजयी फ्राँस की दो महान् आत्माओं की चर्चा कर रहे हैं, जो अब क़ब्र में दो आँखें बन कर, हमें घूर रही हैं—देखने के लिये कि उन्हों ने जो कहा था कहां तक सत्य निकला, जो किया था उसकी कहां तक रक्षा हुई।

जार्जेस क्लेमाँशो

(१८४१ ई० से १९२९ ई० तक)

गत महायुद्ध के समय (१६१७-१६१९) फ्राँस का सर्वेसर्वा (प्रधान मंत्री) और वार्साइ संधि पर फ्राँस की ओर से हस्ताक्षर करने वाला विशेष व्यक्ति ।

---

(१)

एक नहीं, दो नहीं, अनेक स्थानों में, भिन्न २ युगों में, जब हमें महान् आत्माओं का परिचय जेल और फांसी के तख्तों से मिलता है तो बात एक ऐतिहासिक सत्य सी प्रतीत होने लगती है।

क्रांतिकारी भावनाओं से ओत-प्रोत पेरिस के विद्यार्थियों ने प्रजा तंत्र की घोषणा के लिये एक विराट सभा की, परिणाम यह हुआ कि खूब सिर टूटे और अनेकों गिरफ्तारियाँ हुईं— उन्हीं में चौड़े कन्धों और सुडौल सिर वाला डाक्टरी का एक विद्यार्थी भी था। उसकी धमनियों में उष्ण रक्त की धारा विद्युत् वेग से दौड़ रही थी। लेरेविलियर—लेपॉक्स ने राजा लूई के लिये प्राण दण्ड का समर्थन किया था और ला विंदी में साम्राज्यवादियों के विद्रोह को उखाड़ फेंकने का यश भी प्राप्त किया। उन्हीं का वंशज, जार्जेस क्लेमाँशो आज प्रजा तंत्र की घोषणा के अपराध में गिरफ्तार होकर जेल में आया।

क्लेमाँशो के पिता डा० बेञ्जेमिन राजा के साथ नेपोलियन को भी कोसा करते थे। वास्तव में उनका समय रोगियों की देख भाल से अधिक तानाशाहों को कोसने में ही जाता था। डा० बेञ्जेमिन परम्परागत क्रांतिकारी थे, सरकार की 'शत्रु-दृष्टि' सदा उनके पीछे लगी रहती थी। बहुधा देखा गया है कि मूर्ख राजा और निकम्मे पदाधिकारी, कुछ नहीं तो अपने सिर के लिये ही, शहीद पैदा किया करते हैं। डाक्टर साहेब को एक बार प्रासलीन-प्लेस में देखकर राज-कर्मचारियों ने सोचा कि उन जैसा वृद्ध क्रांतिकारी, जो न तो हंस सकता था न नाच ही में भाग ले सकता था, अवश्य किसी षड्यंत्र की योजना में आया होगा। अतः चुप चाप पकड़ कर अलजेरिया में कारावास की यंत्रणा भोगने लिये रवाना कर दिया।

पिता की गिरफ्तारी ने क्लेमाँशो को उत्तेजित कर दिया। उसने अपनी सारी शक्ति को अत्याचार के मूलोच्छेदन में संगठित कर दी। गाड़ी के छोटे से डिब्बे में किसी भयानक वन पशु के समान बन्द पिता के निकट पहुँच कर क्लेमाँशो ने कहा—"मैं इसका बदला अवश्य लूँगा।"

"बदला लेना है तो कर्म शील बन जाओ"—पिता के इस प्राण प्रेरक आदेश ने क्लेमाँशो की धधकती हुई हृदयाग्नि को वायु प्रवेग के समान प्रज्वलित कर दिया।

क्रांतिकारी पिता के क्रांतिकारी पुत्र ने कर्मयोग का प्रचंड मार्ग पकड़ा।

---

(२)

क्लेमाँशो वंशानुकूल पुत्र से भी अधिक कमिष्ठ प्राणी था। विचारशील, दूरदर्शी, भावुक, निर्दयी, कोमल और झक्की—इन सभी गुणों का उसमें प्राचुर्य्य था। दक़ियानूसी उसे छू तक न गई थी। ढर्रा-पन एक महान् व्यक्ति को कभी आकर्षित नहीं कर सकता; स्वभावतः किसी निश्चय को सफल कार्य में परिणत कर देना ही क्लेमाँशो की सच्ची परम्परा समझनी चाहिये। उसकी कीर्तियों में तर्क साम्य नहीं, घटनाओं का जाज्वल्यमान दीप समूह, अवश्य प्रदीप्त है। वास्तव में उसका कर्म पथ लक्ष्य की तन्मयता और एक विशुद्ध अंतर प्रेरणा से ही निर्मित हुआ था।

अपनी वंशावली की खोज करने वालों से क्लेमाँशो को सदा चिढ़ रही। वह कहता—"मेरा वंश पुराना है या नया है-तो उसी मानव समाज का अंश जिसके हम सभी बच्चे हैं।"

क्लेमाँशो का जब जन्म हुआ था उस समय फ्राँस ने अभी तार के व्यापक सदुपयोग को जाना भी न था, बालज़क * अपने कर्ज़दारों को अब भी झांसे बता रहा था; वह अमेरिकन गृह युद्ध के पहिले के दिन हैं जब इटली और जर्मनी में राष्ट्रीय ऐक्य का चिन्ह भी न था।

१८४१ ई०

क्लेमाँशो की जीवन नौका घटनाओं के प्रबल झंझावात में आगे की ओर बह चली। छोटी छोटी बात और साधारण घटना भी महान् आत्माओं को प्रभावित कर देती हैं, उनके विचारों का मानस पटल पर धक्का लगता है, वह जीवन संघर्ष के झकझोरों में अविचलित, अपने आदर्श की ओर संलग्न आगे बढ़ जाते हैं। राजनैतिक प्राणियों के समान न तो उन्हें अवसर की तार्किक खोज रहती है, न ही हानि-लाभ के भाव-प्रति भाव से पटाङ्कित और पटाक्षेप होने की आवश्यकता। क्लेमाँशो ने पतवार पकड़ा और खेता ही गया।

क्लेमाँशो का बाल्य काल फ्राँस के अच्छे दिनों में से गिना जाता है। परन्तु वह उन्नति और शांति भी क्या जहां युवक सरकारी स्वेच्छाचारिता का विरोध न कर सकें? स्वभावतः सरकार और स्वातंत्र्य का पारस्परिक द्वन्द्व बढ़ता हो गया। सरा बर्नहार्ट † के प्रणय गान क्रांति के पुजारियों को लुभा न सके।

१८४८ ई०

कुछ लोगों का कहना है कि क्लेमाँशो इस परिवर्तनीय संसार में भी अपरिवर्तनीय बना रहा। उसने सम्राट के समय में जन्म लिया, साम्राज्य काल में पला, प्रजा तंत्र और पञ्चायती शासन—सब से होकर गुजरा। परन्तु संघर्ष का अन्त अब भी

---

* फ्राँस का जगत प्रसिद्ध लेखक।

† फ्राँस की जगत प्रसिद्ध कलाकार नर्तकी।

न हुआ—उस अनन्त क्रांति की अविछिन्न शृंखला से वह बाहर जा ही नहीं सका। वह था क्रांति का अविचल पुजारी,—बस, क्लेमाँशो की यही अपरिवर्तनीयता थी। उसका अटल विश्वास था कि तानाशाहों के स्थान में "नेतागिरी" स्थापित हो जाने से ही क्रांति का उद्देश्य सिद्ध नहीं होता।

प्रजा तंत्र के लिये वह सदा जीने मरने को खड़ा रहा, प्रजा तंत्र की उसने माँ के समान रक्षा की; उसी प्रजा तंत्र के लिये वह अपने प्राण दे देना या दूसरों के प्राण ले लेना सहज सी बात समझता था। उसकी क्रूरता प्रजा तंत्र की निर्मल ज्योत्स्ना से भरी हुई है। उसके अपराधों के धब्बे कर्मयोग के साधक चिन्ह बन कर रह गये हैं।

क्रांतिकारियों का वंशज, वह सच्चा वीर था। फ्राँस का ही नहीं, वह संसार का महा पुरुष था।

(३)

क्लेमाँशो का जन्म ला विंदी में हुआ था, जहां क्रांति की रुधिर धारायें उमड़ उमड़ कर बहीं थीं और उनके भयानक परिणामों से अब भी सारा वातावरण व्याप्त था। क्लेमाँशो का बाल्यकाल फ्राँस के इसी कोने में बीता जहाँ गृह युद्ध की उत्पीड़क स्मृतियां प्रत्येक हृदय में छिपी हुई बैठी थीं। बालक से युवा हुआ, परन्तु अन्याय और अत्याचार का साम्राज्य पूर्ववत् विराजमान मिला। वस्तुतः ला विंदी के बाल्यकाल में ही उसके युवावस्था की नींव पड़ी थी। ला विंदी की करुण कहानियों को ५० वर्ष उपरान्त भी क्लेमाँशो की लेखनी ने कला पूर्वक चित्रित करके साहित्य और इतिहास का आदरणीय संस्मरण बना दिया है।

क्लेमाँशो बहुधा पिता के साथ गाँव में घूमने निकलता। पिता और पुत्र की विभिन्नता (contrast) दर्शनीय थी, वृद्ध पिता के गाढ़े रंग में क्रूरता और संघर्ष की छाया थी जिसने

साथ में हंसते-खेलते हुये बालक के भावी जीवन को पूर्णतया आच्छादित कर रक्खा था।

क्लेमाँशो को स्वभावत: विद्रोहात्माओं से प्रेम था; वह उस समय भी हंसते हुये मुखों और खिलते हुये फूलों के पीछे एक दुखद अनुभूति और जीवन-उत्पीड़ा की खोज कर रहा था।

क्लेमाँशो का घराना नान्तेस में बस गया परन्तु छुट्टियों में वह अब भी ला विंदी की सैर को निकल जाता। वहां मानव चरित्र के अध्ययन करने का उसे अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। उसकी प्रभाव शाली लेखनी ने आगे चलकर उसमें बाल्ज़ाक की कल्पना का रंग भरा है।

धीरे २ कठोर पिता की देख रेख में ला विंदी की स्वच्छंद सैर कम हो गई। अब नान्तेस में उसकी व्यवस्थित शिक्षा प्रारम्भ हुई। परन्तु क्लेमाँशो एक साधारण विद्यार्थी ही रहा,—शिक्षा केवल शिक्षा के लिये ग्रहण करने में उसे तनिक भी श्रद्धा न थी। पौराणिक (classics) पाठ से उसे बड़ी घृणा थी यही कारण है कि नान्तेस छोड़ कर जब वह पेरिस डाक्टरी पढ़ने चला तो पौराणिक प्रभाव की अपेक्षा उस पर पिता के उग्र विचारों की छाप अधिक गहरी थी।

(८)

महाराज लुई के शासन काल, द्वितीय प्रजातंत्र, तथा साम्राज्य कालीन फ्राँस में—नान्तेस सदा उन कटिबद्ध बृद्ध प्राणियों का केन्द्र रहा जो महाक्रांति की धधकती हुई अग्नि को किसी साम्राज्यवादी या शासकीय उलट फेर में समाप्त नहीं कर देना चाहते थे, बल्कि उनकी अखण्ड प्रेरणा थी कि समस्त संसार को प्रज्वलित करके एक नवयुग का आह्वान हो।

नान्तेस के क्रांतिकारी वातावरण से निकल कर १६ वर्ष का वह नवयुवक डाक्टरी की पढ़ाई समाप्त करने पेरिस चला तो सेंसर की कठोर दृष्टि और जासूसों के विराट जाल से फ्राँस का कोना कोना त्रस्त था। स्वातंत्र्य संघर्ष के वे बड़े ही अप्रिय दिन थे! उस कठिन काल में भी हंसी खेल और 'मधु चाखन हारों' की कमी न थी परन्तु अधिकांश युवक समाज राग-रंग में नहीं, साम्राज्यवाद को धज्जियां उड़ाने में ही व्यस्त था। पेरिस पहुँच

कर क्लेमाँशो को उस दृढ़ व्रती समुदाय में मिलत देर न लगी। वह जीवन से उदासीन न था, फिर भी होटेल और रेस्तोराँ के आनन्द-मनोरञ्जन की अपेक्षा देलेस्तेर के कला भवन में ही उसका समय अधिक व्यतीत होता जहां की वायु भी षड़यंत्र की श्वास-निःश्वास बनकर डोलती रहती थी। यहां को नवयुवक मण्डली क्लेमाँशो के उग्र विचारों से अत्यन्त प्रभावित थी और उसने कुछ चुने हुये मित्रों के साथ यहीं अपनी सर्वप्रथम राजनैतिक घोषणा तैय्यार की; उस घोषणा में तरुण आवेश का ही अधिकतर समावेश हुआ था। उस इतिहासिक रचना का मुख्य वाक्य था—"जिसके लिये हमारे पास सैद्धांतिक आधार नहीं, उसे हम कभी व्यवहार में नहीं ला सकते......जन्म, मृत्यु, विवाह—किसी समय भी पुजारी की शरण में जाना हमारे लिये वर्जित है।......" परिणामतः "विचारानुकूल कर्म संघ" की स्थापना हुई जिसका "उद्देश्य था न्याय और नियम था विज्ञान"। बड़ी मनोरञ्जक बात है कि आगे चलकर इस घोषणा ने स्वयं उसी के धिवाह में विघ्न उपस्थित किया।

घोषणा पर हस्ताक्षर कर चुकने के पश्चात् प्रत्येक फ्राँसीसी विद्यार्थी का कर्तव्य हो जाता था कि किसी समाचार पत्र की स्थापना करे। स्वभावतः क्लेमाँशो ने भी 'ले ट्रैवेल' (Le Travail) को जन्म दिया।

१८६२ ई०

वास्तव में क्लेमाँशो का संग्राम यहीं से प्रारम्भ होता है। उसने आजीवन समाचार पत्रों को शस्त्र मान कर ही अपनाया, ठीक जैसे एक सैनिक बंदूक़ संभालता है। क्लेमाँशो के भाषणों में रणभूमि की झङ्कार है, उसके शब्द कोष में क्रांति की भावनायें भरी हैं। 'सेंसर' के चंगुल से बचे रहने के लिये उसने साहित्य, इतिहास, कला और विज्ञान की आड़ लेकर 'ले ट्रैवेल' में

वैचरिक संघर्ष प्रारम्भ किया। साम्राज्य प्रिय प्रत्येक व्यक्ति उसका शत्रु था। एडमॉन्ड अबॉउट के 'गैताना' पर प्रबल आक्रमण करते ही वह सार्वजनिक दृष्टि में चढ़ गया। उसकी प्रारम्भिक रचनाओं में संयम और अधिकार का प्राचुर्य न हो, परन्तु वह हृदस्वी अवश्य हैं। माइकल के 'फ्रांस का इतिहास' की समालोचना उसकी एक महत्व पूर्ण राजनैतिक भेंट मानी जाती है जहां उसने लिखा था—"वृद्धावस्था के आधार पर स्वेच्छाचारिता का समर्थन करना भूल है।" इस प्रकार घुमा फिरा कर उसने कठोर सेंसर के विपरीत भी जनता पर प्रकट कर दिया कि साम्राज्य का अस्तित्व ही उसके बने रहने का कारण नहीं हो सकता। आठ सप्ताह के संशयात्मक जीवन के उपरान्त 'ले ट्रैवेल' बन्द कर दिया गया। क्लेमाँशो ने निम्न-लिखित पंक्तियों द्वारा लोगों से बिदा ली—"हम भले ही मौन रहें, परन्तु विचार परिवर्तन पर हमें कोई बाध्य नहीं कर सकता। हम असत्य भाषण की अपेक्षा चुप रह जाना ही श्रेयस्कर समझते हैं। ··· उनका कहना है कि पत्थर से टकरा कर हमें पश्चाताप करना पड़ेगा, परन्तु हम पत्थर को ही तोड़-फोड़ डालना चाहते हैं।······हम सबल हैं क्योंकि हमारा संघर्ष आदर्श के लिये है।······" क्लेमाँशो को जेल जाना पड़ा, परन्तु एक समय वह, वहीं "जेल नियंता समिति" का सदस्य होकर आया।

जेल से छूट कर वह ब्लकी * के साथ षड़यंत्रकारी राजनीति में पड़ गया, गुप्त प्रेस चलाया, महाराज को पकड़ लेने का आयोजन किया परन्तु ब्लैंकी ने इस उच्छृङ्खल प्रस्ताव पर विचार करना भी अन्याय समझा। विवशतः अब क्लेमाँशो का ध्यान पेरिस आने के मुख्य

१८६५ ई०

* फ्रांस का प्रसिद्ध षड़यंत्रकारी।

उद्देश्य पर गया। उसने डाक्टरी की पढ़ाई समाप्त की, परन्तु डिगरी प्राप्त करके भी उसने डाक्टरी न की। वास्तव में डाक्टरी उसके दार्शनिक रुचि के विरुद्ध थी। कॉलेज से निकलते ही उसने सहसा, पिता की अनुमति बिना ही, देशाटन का निश्चय किया।

इङ्गलैण्ड होता हुआ वह अमेरिका पहुँचा। अमेरिका में गृह युद्ध की बिभीषिका ने लोगों को व्याकुल कर रक्खा था। यहां आकर उसने पत्रकारी का आश्रय लिया। जेनरल ग्राँट के चुनाव की प्रत्यालोचना करते हुये उसने लिखा था—···"काले लोग गोरों के दास और केवल दया पर ही अवलम्बित नहीं रह सकते···"

अमेरिका के धन वैभव ने कुछ काल के लिये उसकी प्रजातंत्रवादी ज्वाला को ढक दिया। उसने व्यापार के लिये पिता से धन मांगा, उलटे उन्होंने सहायता के स्थान में साधारण खर्च भी बन्द कर दिया। परन्तु वह सहज ही घुटने टेक देने वाला मनुष्य न था। कनेक्टकिट के महिलाश्रम में फ्राँसीसी साहित्य और इतिहास का शिक्षक बनकर जीवन प्रवाह को पूर्ववत् बनाये रखने का उसने सुगम मार्ग ढूँढ लिया। परन्तु इस आर्थिक मुक्ति ने एक नये बंधन की सृष्टि की,—वही बंधन जिसमें स्त्रियों के बीच पहुँच कर पुरुष बंध जाया करता है। मेरी प्लूमर क्लेमाँशो पर रीझ गई। क्लेमाँशो के षड़यंत्रकारी जीवन और प्रजातंत्रवादी इतिहास में मेरी को उसके पूर्व से भी अधिक रंगीन भविष्य की झलक दिखलाई पड़ी। अन्त में दोनों का विवाह भी हो गया। क्लेमाँशो की प्रतिज्ञा (विवाह के समय पुजारी का वहिष्कार) ने विघ्न उपस्थित किया परन्तु अन्त में क्लेमाँशो को विजय मिली।

अब एक से दो होकर, जीवन संग्राम में पैर बढ़ाते हुये, वह एक बार फिर संघर्ष में उतरा।

(५)

नेपोलियन तृतीय के साम्राज्यकाल में फ्रांसको सुख और शांति का अनुभव प्राप्त हुआ था। परन्तु दूरदर्शी लोगों ने इसे मृत प्राय प्राणी का अन्तिम तेज समझ कर रोग का निदान किया। उन्हों ने शंख नाद के साथ कहा—"यह सारी शोभा और सुषमा समाप्त हो जायगी। पतन के पूर्व अन्तिम क्षण तक प्रत्येक राज्यों की यही दशा रही है।..."

क्लेमाँशा का विश्वास था कि स्वातंत्र्य हीन सम्पन्नता हैजे से पीड़ित प्राणी के लिये पकवान के समान है।

सरकार और युवक समाज के बीच विचार स्वातंत्र्य के लिये सघर्ष छिड़ा हुआ था। एक ओर 'सेंसर' का उत्पीड़क नियंत्रण था तो दूसरी ओर प्रेस की विषैली फुङ्कार।

प्रत्येक क्रांति और विद्रोह को प्रज्वलित करने के लिये मर मिटने वालों की आवश्यकता पड़ा करती हैं। कुमार पियर

१८७० ई०

बोना पार्ट ने प्रजातंत्र वादियों से व्यर्थ विवाद मोल लेकर एक जीवन उत्सर्ग करने वाले को उत्पन्न कर ही दिया। और हेनरी रोशफर्ट पर दोषारोपण करके उसे 'डुयल'* के लिये वाध्य किया। नियमानुसार रोशफर्ट की ओर से दो युवक (सेकन्डसः Seconds), कुमार पियर के दो सहायकों का नाम जानने पहुँचे; वहां कुमार की गोलियों ने उनके सीने में घुसकर उन्हें पंचतत्व में मिला दिया। इस अमानुषिक हत्या ने समस्त प्रजा को उद्विग्न कर दिया यहाँ तक कि महाराज को घबड़ा कर तुरन्त पेरिस आना पड़ा। पुलिस की कार्य कुशलता से उसी रात पेरिस में विद्रोह होते होते रुक गया, परन्तु नगर में प्रजा ने युद्ध के लिये तैय्यारी प्रारम्भ कर दी, यहां तक कि सेना में भी महाराज के विरुद्ध "बुद-बुद" होने लगी।

ठीक इसी समय 'फ्राँको-प्रूशियन' (फ्राँस और जर्मनी) युद्ध छिड़ गया और क्लेमाँशो प्रजा की बाग डोर थामने के लिये झटपट अमेरिका से फ्राँस लौटा।

मेरी को ब्रितानी में छोड़ कर वह पेरिस के डोलायमान वातावरण में जा घुसा।

---

* फ्रांस में आत्म सम्मान के निमित्त दो प्रतिद्वंदियों का युद्ध।

(६)

युद्ध छिड़ते ही लोग सरकारी दोषों को भूल गये। उनके नीरस जीवन में नव आशा का संचार हुआ। वह सोच रहे थे शीघ्र ही बर्लिन पहुँच कर विजय पताका फहरा देंगे।

परन्तु उनकी सारी आशायें दुराशा मात्र थीं। सेना नायकों की सैनिक अयोग्यता और भौगोलिक अज्ञान पर जर्मनी ने मद पूर्वक व्यंग किया। फ्राँस दिन को जीत कर रात में हारने लगा। सैनिक कुव्यवस्था के हास्यास्पद दृश्य ने भयंकर रूप धारण किया; छः सप्ताह की हार-जीत एक दिन पराजय बनकर फूट पड़ी,—नेपोलियन ने आत्म समर्पण कर दिया था।

प्रातः काल के शांत वायु मण्डल को भङ्ग करती हुई क्रुद्ध प्रजा मंत्री-भवन (Chamber of Deputies) पर चढ़ दौड़ी। फाटक तोड़ डाले गये; रोक थाम के सारे उपाय निर्मूल सिद्ध हुये। उन्मत्त जन समूह ने सभा भवन पर अधिकार जमा ही लिया।

आगे आगे राष्ट्र रक्षक की वर्दी में उनका अधिनायक था, जार्जेस क्लेमाँशो।

मंत्रियों ने प्रजा को शांत करने का अनेक वार प्रयत्न किया, परन्तु प्रजा ने उनकी एक भी बात न सुनी।

अन्त में, करतल ध्वनि के बीच जेनरल गाम्बेता का प्रस्ताव—"नेपोलियन वंश का राज्य फ्राँस से सदा के लिये समाप्त कर दिया गया"—सहर्ष स्वीकृत हुआ।

जेनरल त्राकू और गाम्बेता की अध्यक्षता में एक अस्थायी (Provisional) सरकार की स्थापना हुई जिसने एतीन अरागों को नगर समिति (Municipal Committee) का प्रधान नियुक्त किया। आरागो ने चार्ल्स फ्लोकेत और क्लेमाँशो को 'सिनेट' (धारा सभा) के संगठन का भार सौंपा। दो-चार दिन में ही सारी शक्ति प्रजातंत्र वादियों के हाथ में आ गई, पुराने कर्मचारियों और नगराधीशों के स्थान में प्रजातंत्रवादी समुदाय प्रकट हुआ—साम्राज्यवादी कल का पेरिस से लोप हो गया। परन्तु इन्हें जितनी लाज शासकीय परम्परा की थी, जितनी उमंग पर्चे बाज़ी में थी, उसका एक अंश रूप भी जर्मनी को परास्त करने की चिंता न थी। परिणामतः क्लेमाँशो की प्रगल्भित घोषणाओं और मैगनिन [किसान मंत्री] की व्याकुल आज्ञाओं के विपरीत भी भोज्य पदार्थ महंगे होते गये और व्यापारियों ने आँख मूँद कर प्रजा को निचोड़ा। किसी केन्द्रिय नियंत्रण के एक दुःखद अभाव से लोग उद्विग्न हो गये। स्थान स्थान पर राष्ट्र रक्षक दल खड़े हुये परन्तु किसको क्या करना था, किसी को नहीं ज्ञात। जेनरल त्राकू की विजय योजना आज तक ताले में बन्द है। उस अस्थायी सरकार में एक भी ऐसा व्यक्ति न था जो सबको प्रभावित करके परिस्थिति

को संभालने में समर्थ हुआ होता,—क्लेमाँशो अभी उस तानाशाही व्यक्तित्व की तैय्यारी कर रहा था। फ़िलहाल, क्रांतिकारी प्रथा के अनुसार लोकमत बिना एक पग नहीं उठाया जा सकता था।

ऐसे संकट काल में भी प्रजावादियों ने अव्यवस्थित कार्य्य-क्रम की अपेक्षा एक स्थायी सरकार चुन लेना अधिक आवश्यक समझा क्योंकि प्रत्येक प्रतिनिधि और प्रत्येक अफ़सर की नियुक्ति चुनाव के द्वारा होनी थी।

क्लेमाँशो ने मॉन्ट मार्टर के चुनाव में धूमधाम से विजय प्राप्त की। अधिकार प्राप्त करते ही सर्व प्रथम उसने सैन्य संगठन और 'नफ़ा-खोरों' का नियन्त्रण किया। स्कूल और पाठ-शालाओं को संगठित करके उसने एक साथ तीन बात सिद्ध की : बच्चों की शिक्षा, निश्चिन्त पिता को सैन्य सेवा, और माताओं को कमाने का अवसर। इन सुकीर्तियों को देखकर प्रजा ने उसे अपना हृदय ही सौंप दिया। क्लेमाँशो सहज ही राष्ट्र सभा के लिये प्रतिनिधि चुनकर बोर्दो भेजा गया।

परन्तु, आह! उसके नेत्र वहां खुल गये। राष्ट्र सभा का दो-तिहाई से अधिक प्रतिनिधित्व धनी और शक्तिशाली लोगों के हाथ में था। वास्तव में लोक तंत्र विरोधी लोगों ने राष्ट्र सभा पर प्रभुत्व जमा लिया था।

क्लेमाँशो के लाख विरोध करने पर भी अलसेस—लोरेन जर्मनी को देकर सुलह कर लेने का निश्चय हुआ। सारी बाज़ी को इस प्रकार खोई जाते देखकर वह निःशब्द रह गया।

निःशब्द और भविष्य के लिये अधिक सावधान!

थियेर उस प्रतिकृत 'राष्ट्र सभा' का प्रमुख चुना गया। उसने पेरिस के उग्र प्रभावों से दूर रहने के विचार से पेरिस के स्थान में वार्साई को फ्राँस की राजधानी बनाया। सेना को उसने पूर्णतया अपने हाथ में रक्खा। इस प्रकार पेरिस पर सफल आघात करने योग्य बना रहना ही उसका ध्येय था। शंका को साकार होते देर न लगी। सम्राट वादी सैनिकों को सेना, पुलिस, यहां तक कि राष्ट्र रक्षकों (National Guards) की भी बाग डोर सौंप दी गयी। लिखने-पढ़ने की स्वतंत्रता छिन गई; ब्लैंकी को प्रतिज्ञा के विरुद्ध मुक़दमा चला कर प्राण दण्ड की आज्ञा हुई।

शासन नीति से भी अधिक प्रलयकारी आर्थिक विधान हुये: 'रुके हुये ऋण' (Moratorium) और 'बक़ाया' किरायों को तुरन्त चुका देने की आज्ञा हुई। परिणामतः सहस्रों दिवालिया और लाखों बेघर हो गये। इस दशा को देखकर क्लेमाँशो पेरिस आया।

जर्मन सेना पेरिस छोड़ कर जाते समय कुछ तोपें भूल गई थी; राष्ट्र रक्षकों ने उन्हें परिश्रम और सावधानी पूर्वक प्लेस दे वोस्जेज़ से बते दे मॉन्ट मार्टेर तक लगा दिया क्योंकि राष्ट्र सभा के अप्रजावादी व्यवहारों से उन्हें संदेह होने लगा था कि एक बार फिर लोक तंत्र के स्थान में सम्राट की स्थापना के लिये प्रयत्न होगा ।

क्लेमाँशो की दूरदर्शिता ने देखा जर्मन सेना के देश में रहते हुये यदि गृह युद्ध छिड़ गया तो दशा बड़ी शोचनीय होगी। उसने सरकार और राष्ट्र रक्षकों का मध्यस्थ बनकर समझौता करा दिया कि पूर्व सूचना बिना सरकार कोई कार्य्यवाही न करेगी। परन्तु १८ मार्च को ६ मार्च वाली प्रतिज्ञा के विरुद्ध सरकार ने बते दे मॉन्ट मार्टेर पर अधिकार जमा लिया, पहरुये निःशस्त्र कर दिये गये। फिर क्या था? चहुँओर कोलाहल मच गया। स्त्री, बच्चे, बूढ़े, जवान—सब टूट पड़े। देखते देखते मानव समुदाय और सेना, दोनों एक हो गये। जेनरल लेकोम्ते ने गोली चलाने की आज्ञा दी, परन्तु उसकी अवहेलना करके सेना भी प्रजा की ओर जा खड़ी हुई। जेनरल लेकोम्ते पकड़ कर जेनरल रोज़ियर के पास लाये गये।

क्लेमाँशो उस समय लगभग २०० अफ़सरों की रक्षा कर रहा था। उसे लेकोम्ते और रोज़ियर का समाचार मिला तो वह जान पर खेल कर भी उन्हें बचाने पहुँचा। परन्तु अब वह प्रजा के सम्मुख एक शंकित प्राणी था। सरकार की ओर से प्रजा को दी हुई उसकी प्रतिज्ञा टूट चुकी थी। लोग बन्दूक का मुंह उसकी ओर करके चिल्ला पड़े—"देश द्रोही।" इन खतरों को भी पार करके वह रोज़ियर के पास पहुँचा तो खेल समाप्त था,—लेकोम्ते और रोज़ियर क्रुद्ध भीड़ की भेंट हो चुके थे।

थिये पेरिस को विद्रोहियों के हाथ में छोड़ कर वार्साई पहुँचा। नगराधीश (Mayors) पकड़दा लिये गये, परन्तु क्लेमाँशो युक्ति पूर्वक बच कर राष्ट्र सभा में उपस्थित हुआ। वहाँ उसके सारे प्रयत्न विफल हुये, उसकी भविष्य वाणी अवहेलनाकी दृष्टि से देखी गयी। निराश हो कर वह एक बार फिर पेरिस आया ताकि रक्तपात को रोका जा सके।

यहाँ की दुःखद परिस्थिति क्लेमाँशो के लिये हृदय विदारक विडंबना बन गई—प्रजा से अविश्वस्त, सरकार से सन्दिग्ध ! यहाँ तक कि समझौते की बात करना भी अपराध-घोषित कर दिया गया।

सरकार और प्रजा, दोनों उसके प्राण के लिये लालायित थे।

क्लेमाँशो के प्रजा प्रेम की यह एक ऐतिहासिक लघु—लपेट (Paradox) है !

(८)

हिंसा और प्रतिहिंसा की रक्त धारा से पृथ्वी और आकाश लाल हो गये। नगर खण्डहर बन गए, कोने कोने से बारूद की गंध और धुयें के बादल उठ रहे थे।

परन्तु वायुमण्डल के साफ होते ही लोगों ने आत्म ग्लानि के साथ अनुभव किया कि क्लेमाँशो वास्तव में प्रजा भक्त था,—उसकी उपेक्षा करके बनने वाली बात भी बिगाड़ दी गयी थी।

क्लेमाँशो ला विंदी से लौट कर पेरिस आया तो गाम्बेता राष्ट्र सभा की सम्राटवादी भावनाओं के विरुद्ध प्रजावादी संघ को सुदृढ़ करने की चेष्टा में था। क्लेमाँशो तत्काल राजधानी (पेरिस) के पुनर्निर्माण में व्यस्त हो गया। अपने सिद्धान्त की रक्षा के लिये उसे सैनिक, धार्मिक, नागरिक—प्रत्येक दिशा में संघर्ष करना पड़ा। संक्षेप में, उसका सारा अथक परिश्रम दीन दुखियों के कष्ट निवारण और उन्हें सुशिक्षित बनाने के

लिये ही था। दीन दुखित लोगों का उससे अच्छा ज्ञान, उससे घनिष्ट सम्पर्क स्यात् ही किसी राजनीतिज्ञ का रहा हो !

वह शीघ्र ही नगर समिति (Municipal Council) का प्रधान चुना गया। इस समय उसकी अवस्था ३४ वर्ष की थी। यह वह अवस्था और वही परिस्थिति है जहाँ से फ्राँस के प्रत्येक राजनीतिज्ञ ने वैधानिक (Parliamentary) जीवन की तैयारी की है।

उसने भली भाँति समझ लिया था कि सम्राटवादी धीरे धीरे लोक तन्त्र के विरुद्ध भयंकर रूप धारण करते जा रहे थे। झट पट उसने नगर भवन (Town Hall) में डाक्टरी की दूकान खोल दी; यहाँ प्रत्येक रविवार को शारीरिक रोग निदान के साथ राजनैतिक रोग निदान होता। छोटी सी दूकान, ठसा ठस भर जाती। कुछ तो सचमुच दवा लेने वाले होते, पर अधिकांश लोग क्लेमाँशो के कृपा पात्र बनने के लिये वोट का बचन देने आते थे। क्लेमाँशो ने यहाँ का एक दृश्य चित्रित किया है:—"एक दिन सचमुच एक रोगी आ पहुँचा,—उसे क्षय हो गया था। मैं ने उसे एक कोने में बैठा कर कपड़ा उतारने को कहा। इसी बीच में दूसरा क्षय पीड़ित आया, उसे भी मैं ने दूसरे कोने में कपड़ा उतारने को कहा। इतने में तीसरे व्यक्ति ने पदार्पण किया। वह हृष्ट पुष्ट था। दो व्यक्तियों को मैं ने कपड़ा उतारने को कहा था, नव आगंतुक बिना मेरे कहे ही झट पट कुर्ता-पाजामा खोल कर नङ्गा खड़ा हो गया। मैं ने पूछा 'क्या है' तो वह तत्परता पूर्वक बोला—'सरकार, मुझे डाक घर में नौकरी चाहिये।' वह वोटर था, उसने समझा, जैसे दूसरे कपड़ा उतार रहे थे, उसी प्रकार उसे भी कपड़ा उतारने पर ही कुछ प्राप्त होगा।"

यह है क्लेमाँशो की राजनैतिक डाक्टरी ! उसके जीवन का एक मनोरंजक अङ्ग ।

क्लेमाँशो का अटल विश्वास था कि फ्रांस में क्रान्ति का मार्ग वैधानिक संघर्ष से ही होकर गया था। दूसरे वर्ष वह राष्ट्र सभा (National Assembly) का प्रतिनिधि चुन लिया गया।

* * * * *

फ्राँस की राजगद्दी के कई दावेदार असफल हो चुके थे। परिणामतः प्रजातन्त्र का मार्ग निष्कण्टक होता गया। ज्यों ज्यों विरोधियों का पाँव उखड़ने लगा, प्रजातन्त्र में नयी शक्ति आयी। प्रदीप्त अग्नि शिखा के समान गाम्बेता देश के इस कोने से उस कोने तक फिरा और प्रजावादियों (Republicans) को विराट सफलता प्राप्त हुई। पराम्त और पीड़ित जनता ने देखा कि प्रजातन्त्र की स्थापना रक्त पात और अकाल के बिना भी हो सकती थी,—लोगों ने इस नव नीति में हृदय खोल कर साथ दिया।

१८७५ ई० प्रजातन्त्र की पुनर्स्थापना हुई। क्लेमाँशो ने हर्ष नाद किया—"हम जीवित हैं।"

प्रजातन्त्र का जीवन क्लेमाँशो का अपना ही जीवन था।

(६)

आसन का उत्तर दायित्व एक भयंकर बोझ है ! धारा सभा में आकर गाम्बेता के सदृश साहसी और कर्मशील व्यक्ति भी शांति और व्यवस्था का उपासक बन गया। परन्तु क्लेमाँशो पूर्ववत् क्रान्ति का अखण्ड आलाप लेता रहा। उसने गगन गर्जन के साथ कहा—"वह कहते हैं हमें कम से कम चाहिये, हम कहते हैं अधिक से अधिक। हमें मानसिक शान्ति नहीं, प्रजातन्त्र के यथार्थ फलों की आवश्यकता है, उन फलों की जिनसे हमारी दशा में सुखद परिवर्तन हो........."

क्लेमाँशो की बातों में आज भले ही कोई विशेष उद्गार न हो, पर उस समय के लिये वही चिनगारी के समान थीं,

क्लेमाँशो ने उनका मौखिक प्रयोग नहीं किया था, अपितु अपने प्रत्येक शब्द को कार्य रूप में परिणत करने के लिये वह प्रतिक्षण कटिबद्ध रहा।

प्रजावादी विजय अब तक एक प्रकार से कागज़ी कार्य्यवाही मात्र रही। मैक महॉन (प्रधान) जम कर प्रजावादियों की बढ़ती हुई शक्ति का विरोध-करना चाहता था। क्लेमाँशो भी उसी मुठ भेड़ की तैयारी में लगा। उसके चतुर शासन और पूर्व सेवाओं को देख कर पेरिस की जनता भी उसका भरपूर साथ देने पर तुल गई। धारा सभा में पग धरते ही लोगों पर व्यक्त हो गया कि उससे भिड़ना लोहे की दीवार से टकराने के समान था। उसने वैधानिक भाषणों की नयी और मंजी हुई परम्परा चलायी जिसका (अङ्गरेजों के समान ही) फ्राँसीसी राजनीतिज्ञों को ज्ञान भी न था। उसकी व्यवस्थित बहस के सम्मुख बड़े बड़ों का तर्काधार छिन्न-भिन्न हो जाता था। धीरे धीरे गाम्बेता और क्लेमाँशो के चहुँ ओर प्रजावादी बल को संगठित होते देख कर प्रधान मैक महॉन ने जुलेस साइमन को मन्त्री पद त्यागने पर वाध्य करके धारा सभा को बर्खास्त कर दिया।

दूसरे चुनाव की तैय्यारी होने लगी। गाम्बेता अपने दृढ़ सहयोगियों को लेकर फिर उठा। क्लेमाँशो के साथ ही गाम्बेता के अन्य मित्र भी प्रत्येक रूप से मोर्चा लेने पर उतर आये। क्लेमाँशो ब्लैंकी का शिष्य रह चुका था। पेरिस के विद्यार्थी जीवन में उसने षड़यन्त्रकारी कीर्तियों का साक्षात् भी किया था। चुनाव में दल-बल सहित विजय पाने के लिये उसने शस्त्र और नीति—आवश्यकतानुसार दोनों का प्रयोग उचित

समझा। पेरिस के कोने कोने में शस्त्र खरीद कर रख दिये गये। क्लेमाँशो सशस्त्र संग्राम से बचना ही चाहता था, परन्तु उसे शंका थी कि शत्रु सेना की सहायता से सत्ता छीन लेने का प्रयत्न करेगा। लेन देन के उस कटुतर समय में क्लेमाँशो को सोया रह जाना स्वीकार न था।

इधर प्रधान मैक महॉन ने प्रचार, सरकारी सुविधा और दमन का भरपूर लाभ लेते हुये प्रजावादियों को उखाड़ कर फेंक देना चाहा। परन्तु प्रजा ने प्रजावादियों का अचूक साथ दिया। प्रजावादी दल ने विजय प्राप्त की।

फ्राँस के बाहर, लोक तन्त्र की इस अपूर्व विजय को देख कर साम्राज्यवादी जर्मन सशंक हो उठा। कहा जाता है कि जर्मन सम्राट ने मैक महॉन के पास संदेश भेजा था कि फ्राँस में अग्रसर (Radical) सरकार की स्थापना हुई तो वह फ्राँस पर पुनः विजय आक्रमण कर देगा।

जो भी हो, धारा सभा की बैठक हुई और प्रधान मन्त्री ब्रागली ने कहा—"......हम अग्रसरता और सामाजिक विस्फोट से समझौता नहीं कर सकते।" गाम्बेता ने गरजते हुये उत्तर दिया—"हो सकता है हमारे और आपके बीच फ्राँसीसी जीवन के सम्बन्ध में मत भेद हो, परन्तु शोक है कि पिछले घटना क्रम और दुःखद इतिहास के विपरीत भी आपने अब तक प्रजावाद के प्रादुर्भाव को नेत्र खोल कर देखने से इन्कार कर दिया है। मैं कहता हूँ कि संसार बदल जाय परन्तु आप फिर भी तानाशाह और प्रजातन्त्र के शत्रु ही रहेंगे ......"

मन्त्रिमण्डल को करारी हार खाकर त्याग पत्र देना पड़ा।

इसमें क्लेमाँशो का बहुत बड़ा भाग था। उसने मंत्रिमण्डल को परास्त करके प्रथम बार चीते के समान रुधिर का स्वाद लिया।

१८७७ ई० चारों ओर से निराश होकर मैक महॉन को विवशतः प्रजावादी मन्त्रिमण्डल स्वीकार करना पड़ा। सात वर्ष के निरन्तर संघर्ष के उपरान्त एक तन्त्र शासन की विचार भावना अब जाकर कहीं नष्ट हो सकी।

प्रजातन्त्र लोकमत बन कर प्रकट हुआ।

(१०)

क्लेमाँशो की अवस्था ३६ वर्ष की हुई। वह यद्यपि अब तक गाम्बेता की छाँह में ही लड़ रहा था, फिर भी उसके अग्रसर व्यक्तित्व का साँचा ढल चुका था। साम्राज्य का बिध्वंस, राष्ट्र सभा में प्रतिनिधित्व, नगर समिति की अध्यक्षता इत्यादि—नाना रूप से उसका नेतृत्व सिद्धार्थ हुआ। वह लोगों का था, लोगों को उसने अपना समझा। वास्तव में उसका जीवन प्रजा का ही जीवन रूप था। लोगों के दुःख दारिद्र, उनकी आवश्यकताओं तथा अभाव का सजीव प्रमाण बनकर उसने प्रजातन्त्र का शंख फूंका था जिसकी ब्रह्माण्ड भेदी गूञ्ज अब भी हमारे कानों में है।

क्लेमाँशो ने प्रजातन्त्र को फ्रांस का वैधानिक सत्य बना कर सशंक संरक्षक का पद ग्रहण किया। वह जानता था कि प्रजातन्त्र का यथार्थ फल लोगों को नहीं मिला था, फिर भी कुसमय और अदूरदर्शी उद्दण्डता में प्रजातन्त्र का अस्तित्व

भी मिटा देना उसके लिये फल की प्रतीक्षा करने से भी अधिक भयंकर था। इसी लिये उसने सदा आतुर प्राणियों को दबाते हुये समय तथा वैधानिक उपायों का निर्देश किया। "स्वतन्त्रता, समानता. और बन्धुत्व" की कोरी पुकार और उसकी चित्रकारी और सभा प्रदर्शन में उसे तनिक भी विश्वास न था। वह चाहता था फ्राँसीसी विधान और लोगों का हृदय—दोनों "स्वतन्त्रता, समानता, तथा बन्धुत्व" के रङ्ग में प्रगाढ़ हो उठें। यही कारण है कि वह फ्राँस को किसी ऐसी परिस्थिति में नहीं डालना चाहता था जहाँ देश की अस्तित्व रक्षा भी कठिन हो जाय।

क्लेमाँशो पद ग्रहण करके सरकारी यन्त्र बन जाने की अपेक्षा स्वतन्त्र समालोचक रहना ही श्रेयस्कर समझता था ताकि मार्ग-चिन्ह के समान वह प्रजातन्त्र को पथ भ्रष्ट होने से रोक सके। उसका अटल विश्वास था कि प्रजातन्त्र स्थापित हो जाने के पश्चात राजनैतिक समस्याओं की अपेक्षा सामाजिक सुधार अधिक आवश्यक थे। उसका कहना था कि जिस समाज में एक के पास सुख और सम्पत्ति का आधिक्य हो, और दूसरे के पास रोग तथा भूख की घनीभूत उत्पीड़ा—वह समाज कभी स्थायी नहीं रह सकता। वह चाहता था कि प्रत्येक व्यक्ति को नैतिक और भौतिक प्राप्ति का सम्पूर्ण साधन सुलभ हो। यही उसके प्रजावाद का मूल तत्व है।

क्लेमाँशो ने श्रमिक समुदाय को बार बार चेतावनी दी कि लाभ के बंटवारे, श्रम अवधि की कमी, या पूंजी के "राष्ट्रीय—करण" का विधान रच देने से ही सामाजिक समस्यायें हल नहीं हो जातीं क्योंकि सदियों का समाज, एक दिन में, कानून की एकाध धाराओं से ही नहीं बदला जाता। वास्तव में क्लेमाँशो

का विचार था कि पग फूँक फूँक कर रक्खे जायें और प्रत्येक पग अपने स्थान पर दृढ़ पड़ें। वह थोड़े से लाभ के लिये बहुत सा रुधिर नहीं बहाना चाहता था। उसकी इस सावधान नीति को लेकर श्रमिक-समुदाय ने क्लेमाँशो को अत्याचारी और तानाशाह भी कह डाला। परन्तु वह इन निराधार लाञ्छनों से विचलित होने वाला जीव न था।

१८८२ ई० पद (मन्त्रि मण्डल) ग्रहण करके वह अपने आलोचनीय स्वातन्त्र्य को खो नहीं देना चाहता था; स्वभावतः वह विरोध पक्ष में ही रहना हितकर समझता था। परंतु गाम्बेता ने पद ग्रहण किया और क्लेमाँशो उस 'महा मन्त्रि मण्डल' का उखाड़ फेंकने पर विवश हो गया। चीते की यह तीसरी झपट थी। इसी प्रकार अपने समस्त वैधानिक काल में धारा सभा को निष्कण्टक बनाये रखने के लिये वह मन्त्रि-मण्डलों का जीवन लोप करता रहा,—मैत्री या पदलालसा, कुछ भी उसकी आक्रमण वृत्ति को शिथिल न कर सकी। इसी लिये इतिहास कारों ने उसे 'टायगर' (Tiger:चीता) पुकारा है।

वह चीता था ही, राजनैतिक चीता !

(११)

युद्ध के पश्चात् फ्रॉंस ने तेज़ी के साथ पुनर्संगठन किया, परन्तु, दस वर्ष के पश्चात, अब भी शंका बनी हुई थी कि जर्मनी उसके अन्तरराष्ट्रीय प्रगति से किसी समय भी असन्तुष्ट हो सकता था। फ्रॉंस और इङ्गलैण्ड का साम्राज्यवादी मार्ग संसार के कोने कोने में एक साथ होकर गुज़रा था और जर्मनी ने सदा यही प्रयत्न किया कि दोनों को पारस्परिक द्वन्द्व में डालकर शक्ति क्षीण कर दे ताकि उसे स्वयं अपने विस्तार में किसी तरह की बाधा की संभावना न रह जाय। फ्रॉंस को 'शह' देकर अङ्गरेज़ों के विरुद्ध बढ़ाने में बिस्मार्क का यही मूल उद्देश्य था।

१८८१-८२ ई० उस दुर्गम चट्टान को क्लेमॉंशो ने भली भाँति देखा। वह अग्रसर दल का अजेय नेता था। धारा सभा की अदालतों में उसे देख कर सुदृढ़ सरकारों के भी पाँव हिल जाते थे। अवकाश का लाभ उठा कर मन्त्रि मण्डल

ने धारा सभा की अनुमति बिना ही ट्युनिस सेना भेज दी; परिणाम हुआ—युद्ध और विद्रोह। धारा सभा की बैठक होते ही शक्ति शाली क्लेमाँशो भूखे बाघ के समान झपटा और मन्त्रि मण्डल को छिन्न-भिन्न होकर पद त्याग करना पड़ा। जूलेसे फ़ेरी के पश्चात गाम्बेता, फेसिनेट, फिर फेर्री—अनेक मन्त्रि मण्डल आये और उस चीते का शिकार होते गये। एक बार पंजे में पाकर क्लेमाँशो किसी को छोड़ना जानता ही न था। उसने बार बार फ्राँस को उपनिवेशकीय राजनीति में पड़ कर क्षीण होने से रोका। उसका सिद्धान्त था कि विजय और विस्तार के लिये जो युद्ध लड़ा जाता है वह वस्तुतः क्रांतिकारी आदर्श के विरुद्ध होता है। क्रान्ति की वेदी पर सभ्य और असभ्य में भेद स्थापित करना वह मानव पवित्रता का अपहरण समझता था। जिसने उसकी इस नीति का विरोध किया उसे परास्त होकर पीछे हटना पड़ा।

फ्राँस की राजनीति में, मन्त्रि-मण्डलों से बाहर, वह प्रत्येक मन्त्रि-मण्डल के लिये भय और नियन्त्रण का साक्षात रूप बन कर संघर्ष शील रहा।

१९८६ ई० फ्राँस धीरे धीरे सुदृढ़ हो चला। उपनिवेशकीय विस्तार की द्वन्द्व पीड़ायें कम हो गईं। बिस्मार्क का चंगुल ढीला पड़ गया। स्वभावतः अब सामाजिक सुधार का समय आया। समाज वादी संघ ने प्रजातन्त्र को फली भूत देखना चाहा।

परन्तु एक के पश्चात दूसरे--विलसन,[1] बोलाँजर,[2] पनामा[3] तथा ड्रेफ़स[4] के घृणास्पद मामलों ने प्रजातन्त्र को पंगु सा बना दिया।

---

१. प्रजातन्त्र के प्रधान, मो ग्रेवी के जामाता, विलसन ने पद सम्मान का विक्रय प्रारम्भ किया था।

२. बोलाँजर क्लेमाँशो की सहायता से मन्त्रिमण्डल में आया और फिर युद्ध मन्त्री बना। धीरे धीरे वह अपनी चतुर चालों से प्रजा और सेना-दोनों का उपास्य देव बन गया। प्रजा उसके पीछे मतवाली फिरने लगी। परन्तु लोगों पर प्रकट हो ही गया कि वह सम्राटवादियों का शस्त्र बन कर प्रजातन्त्र को ग्रस लेना चाहता था;

पनामा के आघात ने क्लेमाँशो की सारी सेवाओं और प्रजावादी परिश्रम पर पानी फेर दिया। न्याय के सम्मुख निर्दोष सिद्ध हो जाने पर भी शत्रुओं को शान्ति न मिली। पुनः निर्वाचन द्वारा फैसले की चुनौती दी गयी। प्रजा का विश्वास लङ्कर छोड़ चुका था। क्लेमाँशो परास्त होकर वैधानिक जीवन से अलग होना पड़ा। उसका दल नष्ट-भ्रष्ट हो गया।

एक संकटमय संघर्ष के पश्चात प्रजा को उसका सम्राटवादी षड्यन्त्र देख कर महान आत्म ग्लानि हुई। बोलाँजर को परास्त होकर भागना पड़ा।

२. पनामा नहर बनाने के लिये एक कम्पनी खोली गयी। दुष्टों ने भोली भाली प्रजा का धन उड़ा लिया। पता चला कि अभी लाखों की और आवश्यकता थी। परिस्थिति की रक्षा करने के लिये सरकारी ऋण द्वारा रुपया एकत्रित करने का प्रयत्न हुआ। सरकारी ऋण के लिये सरकारी आज्ञा की आवश्यकता थी। प्रत्येक प्रतिनिधि (Deputy) और प्रत्येक समाचार पत्र को बड़े बड़े घूस से फाँसा गया। फिर भी (१८६१ में) सारी कम्पनी १२००००००० फ्रैंक के घाटे से दिवाला बोल गई। सरकार ने जाँच प्रारम्भ की। फ्राँस के प्रत्येक अफ़सर और प्रत्येक प्रतिनिधि का नाम इस राजनैतिक ठगी में कलंकित होना चाहता था। सम्राट वादियों ने पनामा की आड़ से प्रजावादियों को उखाड़ कर प्रजातन्त्र को ही हड़प लेना चाहा। पनामा के ठगों में दो मुख्य व्यक्ति थे : बैरन रेनॉक और डा० हर्ज़। डा० हर्ज़ क्लेमाँशो के पत्र 'ला जास्टिस' का हिस्सेदार भी था। थे दोनों यहूदी। दोनों का लम्बा चौड़ा और जटिल इतिहास है। सारांश यह कि रेनॉक ने आत्म हत्या कर ली और विस्तृत तथा दुखद जाँच के पश्चात क्लेमाँशो निर्दोष सिद्ध हुआ।

क्लेमाँशो की अवस्था इस समय ५२ वर्ष की थी। धारा सभा से अलग होकर उसने एक बार फिर आदि से प्रजातन्त्र में अग्रसरता की प्राण प्रतिष्ठा करना चाहा। वह परास्त हो गया था, परन्तु मनुष्य में उसे अब भी विश्वास था। उसके स्थान में यदि कोई दूसरा व्यक्ति होता तो चुपचाप मुँह छिपा कर बैठ रहता या शत्रु से समझौता करके किसी दूसरे चुनाव में विजयी होने की चेष्टा करता। परन्तु क्लेमाँशो अपने सत्य और अटल आत्म विश्वास के बल पर झुकने के बजाय सम्मान पूर्वक अकड़ गया; देश द्रोही कहला कर भी वह संग्राम में अड़ा रहा। वह रत्ती भर भी विचलित न हुआ। उसने गर्व पूर्वक कहा—"जब तक मैं बोल और लिख सकता हूं, मुझे कोई परास्त नहीं कर सकता। जब तक मुझे विश्वास है कि मैं सद्मार्ग पर हूँ, मैं बढ़ता ही जाऊँगा।" एक दूसरे मित्र से उसने कहा—"अकेले में मनुष्य का बल और भी बढ़ जाता है।" वह वैधानिक समुदाय से पृथक् होकर अकेला अवश्य हो गया था, परन्तु अब वह अधिक निरबन्ध था; परिणामतः उसने अधिक शक्ति का अनुभव किया।

परन्तु इस स्वातन्त्र्य और बल का एक दूसरा अङ्ग भी था: आर्थिक उलझन। 'ला जस्टिस' का ऋण चुकाने के लिये उसे अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु को भी बेंच देना पड़ा। फिर भी वह दृढ़ पग धरता हुआ आगे बढ़ा। मार्ग में पर्वत को घूम फिर कर पार करने की अपेक्षा उस पर सीधे चढ़ कर पार हो जाना ही उसका स्वभाव था। वास्तव में ऊपर न चढ़ने को वह नीचे गिरना समझता था।

* * * * *

क्लेमाँशो अपने विचारों को इस प्रकार रखता था कि समाज उन्हें सहज ही कार्य रूप दे सके। धारा सभा का आधार छिनते ही उसने लेखनी का आश्रय लिया, 'ला जस्टिस' उसका शस्त्र बना। संसार ने सहज ही अनुभव किया कि वह अजेय वक्ता ही नहीं एक अपूर्व पत्रकार भी था। निःसन्देह अब तक उसका यह चारित्रिक सत्य वैधानिक उलझनों में दबा हुआ था।

शत्रु दल ने समझा था क्लेमाँशो धारा सभा के बाहर, अधिकाधिक 'ला जस्टिस' की संकुचित परिधि में पड़ कर धीरे धीरे रङ्ग-मंच से लोप हो जायगा। परन्तु जब उन्हों ने देखा कि वैधानिक बन्धनों से मुक्त होकर उसकी विचार धारा देश-विदेश, सब को आच्छादित करने लगी तो उनको विस्मित हो जाना पड़ा। अब वह कभी-कभी के स्थान में नित्य-नैमितिक रूप से बोलने लगा, निरबन्ध शक्ति और विवर्द्धित तर्क प्रवाह के साथ। सामाजिक प्रश्न और जीवन रहस्य—दोनों ही उसके विषय थे। स्थानीय अत्याचार और ऐतिहासिक वैभव—कोई प्रसंग ऐसा न था जो उसकी प्रतिभाध्वनि लेखनी से चित्रित न हुआ हो। एक ओर उसने प्राकृतिक छटा का उल्लेख किया तो दूसरी ओर दुख-दारिद्र, सामाजिक अन्याय, किसान तथा मजदूरों की करुण कहानी उसकी लेखनी में पड़कर जीवन की घनीभूत पीड़ा बन गई। कला विवेचन हो या राजनैतिक समस्या—उसकी हृदयङ्गम भाषा ने सब में एक अतिरस्कीय प्रश्न उत्पन्न किया। उसकी प्रत्येक रचना और लेख में त्रस्त समाज के प्रति सहानुभूति का एक अगाध स्त्रोत बह रहा है। उसकी स्वाभाविक कटाक्ष और परिहास वृत्ति शत्रु की चुटकी लेने

में सिद्धहस्थ थी। परिणामतः 'ला जास्टिस' की संस्करण संख्या आश्चर्यजनक गति से बढ़ने लगी। दूसरे पत्रों ने भी क्लेमाँशो से कुछ लिखने की प्रार्थना की। अब उसके विचार माध्यम एक से अनेक हो गये।

क्लेमाँशो के सुधारक विचार और उसके चारित्रिक माहात्म्य को देख कर प्रजा ने आत्म ग्लानि के साथ अपनी भूल को अनुभव किया, और प्रथम अवसर प्राप्त होते ही उसे फिर धारा सभा में प्रतिनिधि चुनकर भेजने का निश्चय किया। गत चुनाव में विरोध करके जो उसके पराजय का कारण बने थे, वे ही उसे फिर खड़े होने की प्रार्थना करने आये। परन्तु क्लेमाँशो को पद की तनिक भी लालसा न थी,—वह वैधानिक प्रतिनिधि से अधिक सेवा पत्रकार रूप में कर सकता था।

अन्त में लोगों के दबाव के कारण, उसे झुकना ही पड़ा। एक बार फिर धारा सभा में उसे देखकर प्रजा ने सन्तोष की साँस ली!

* * * * *

ड्रेफ़स फ्राँसीसी सेना का एक व्यक्तित्व हीन पर चतुर अफ़सर था। उसे देश द्रोह के अपराध में सैनिक अदालत ने आजीवन कारावास का दण्ड दिया था; कहा जाता था कि ड्रेफ़स ने फ्राँसीसी सेना का गुप्त रहस्य जर्मनी को बेचा था। वास्तव में प्रजावादी यहूदी होने के कारण ड्रेफ़स सेना के कैथॉलिक मतानुयाइयों का शत्रु-सा ही था।

ड्रेफ़स के हितैषियों ने क्लेमाँशो से सहायता माँगी। क्लेमाँशो अन्याय के मूलोच्छेदन में अपने जीवन और जीविका की बाज़ी लगाने में भी भयभीत न होने वाला पुरुष

था, परन्तु न्याय की पुकार उठाने के पूर्व सर्व प्रथम उसे ही विश्वास हो जाना आवश्यक था कि ड्रेफ़स वास्तव में निर्दोष है। अस्तु, उसने पग उठाया ही,—परन्तु उसे अनुमान भी न था कि उसके प्रथम पग ने ही पनामा से भी भयंकर और शक्ति शाली शत्रु को सचेत कर दिया था। क्लेमाँशो को विश्वास था कि ड्रेफ़स को अनुचित रूप से दण्ड दिया गया है; और यह बात लोगों पर प्रकट होते ही वह स्वतः सुलझ जायगी? बात यह थी कि ड्रेफ़स का मामला जब न्यायाधीशों के सम्मुख था तो कुछ सरकारी पत्र इत्यादि गुप्त रूप से न्यायाधीशों को दिखाये गये थे जिसका अभियुक्त या उसके वकील को कुछ भी ज्ञान न हो सका कि वह काग़ज़ थे कैसे, उनमें था क्या। क्लेमाँशो इसी अनुचित कार्य्यवाही को लेकर ड्रेफ़स के मामले पर पुनः विचार करवाना चाहता था।

क्लेमाँशो कदापि नहीं चाहता था कि किसी अपराधी को अनुचित रूप से दण्ड दिया जाय। ड्रेफ़स के मामले को उसने एक व्यक्ति का प्रश्न समझ कर नहीं उठाया, अपितु अनुचित विधान और अन्याय के विरुद्ध उसने न्याय का पक्ष लिया। एक बार रणक्षेत्र में कूद कर वह पीछे हट जाने वाला योद्धा न था, उसने अन्त तक संघर्ष किया। ड्रेफ़स सम्बन्धी उसके लेख सात बड़ी बड़ी पुस्तकों में संग्रहित हैं। उसने एक स्थान पर लिखा है—" .....जब एक व्यक्ति के विरुद्ध सरकार की समस्त शक्ति खड़ी हो जाय तो समस्या साधारण नहीं, न्याय-अन्याय का द्वन्द्व है जहाँ सत्य द्वारा कटु असत्य का मूलोच्छेदन करना ही श्रेयस्कर है! यह व्यक्तिगत नहीं अपितु सारे संसार का प्रश्न है जहाँ हमारा अतीत मानव अत्याचारों का सजीव रूप बन कर सामाजिक नींव को हिला

देता है। शक्ति और तर्क के युद्ध में मानवता को संज्ञाहीन देख कर स्वभावतः हृदय पुकार उठता है—न्याय! .....

फ्राँसीसी प्रजा और सैन्य अफ़सरों में सदा से अन्तर रहा है। क्रान्ति के पश्चात सम्पन्न और शक्तिशाली समुदाय ने प्रजातन्त्र में स्वरक्षा और सम्मानित जीवन व्यतीत करने के लिये सैन्य वृत्ति ग्रहण कर ली। वह लोग प्रजावादी प्रगति में 'ब्रेक' (Brake : अड़ंगा) रूप से विद्यमान थे,—वंशानुकूल वह लोकमत के विरोधी थे। ड्रेफ़स इन्हीं सनातन दकियानूसों का शिकार हुआ। ड्रेफ़स के मामले में हस्तक्षेप करने का अर्थ था एक लोह पर्वत से टक्कर लेना; ऐसा ही हुआ: न्याय की माँग करते ही सरकार की आड़ में सैन्य शक्ति ने प्रचण्ड रूप धारण किया। परन्तु क्लेमाँशो ने भी ऐसे ही दुर्गम गढ़ विजय के लिये संसार में जन्म लिया था; उसने ड्रेफ़स को मुक्त करा के ही साँस ली। ड्रेफ़स ९ वर्ष के उपरान्त मृत्यु के मुंह से निकल कर बाहर आया, फिर उसकी सेना में नियुक्ति भी हुई।

यह है उस अजेय पुरुष का एक संघर्षमम् चित्र!

(१३)

अपने आतंकवादी स्वभाव के कारण क्लेमाँशो के अनेकों शत्रु बन गये थे। परन्तु लेखनी ने उसे वह शक्ति प्रदान की थी जो बिरले ही मनुष्य को प्राप्त होती है।

बहुत चेष्टा करने पर भी क्लेमाँशो को पद ग्रहण करना ही पड़ा,—सैरीन मन्त्रि मण्डल में वह 'अन्तर विभाग' (Interior) का मन्त्री बन गया।

इस समय समाजवाद अपने उच्चतम शिखर पर था; श्रमिकों और पूँजी वादियों का द्वन्द्व उत्कट रूप से बढ़ा। चारों ओर संघर्ष और हड़तालों की धूम थी।

२५-१०-०६ ई० ऐसे विकट काल में वह स्वयं प्रधान मन्त्री बना। यहाँ आते ही उसने सर्व प्रथम श्रम विभाग की स्थापना करके रेने विवियानी को श्रम मन्त्री नियुक्त किया। क्लेमाँशो समाज वादी था, परन्तु

समाज वादियों की कार्य प्रणाली का समर्थक नहीं। वह कहता—"भविष्य के स्वर्ण चित्रण में वर्तमान को अलोप कर देना असत्य और मूर्खता है। शासक और शासित—दोनों ही प्रजा के अङ्ग हैं, और दोनों के सुसंयोग से ही नवयुग का निर्माण हो सकता है। एक के सन्तोष के लिये दूसरे को कुचल देना तीसरे रोग को जन्म देता है। मज़दूरों को सुखी और शक्तिवान् होने के लिये संयत कार्यावलि का आश्रय लेना होगा, न कि प्रतिहिंसा और प्रतिकार का। एक को हड़ताल करने की स्वतन्त्रता हो तो दूसरे को कार्य करने की भी स्वतन्त्रता होनी चाहिये।......" उसके इस वैयक्तिक स्वातन्त्र्य का कोई प्रतिवाद न कर सका।

मज़दूरों के साथ ही किसानों ने भी आन्दोलन प्रारम्भ किया। क्लेमाँशो ने सर्व प्रथम शान्ति और समझौते का आश्रय लिया, परन्तु अराजकता और विद्रोह में प्रजातन्त्र का अस्तित्व ही शंका जनक हो उठा तो विवश हो कर उसे शस्त्र प्रयोग की आज्ञा देनी पड़ी। क्लेमाँशो कभी स्वीकार न कर सकता था कि उद्दण्ड लोग सेना को गोलियों का शिकार बनाते जायें और सेना राष्ट्र व्यवस्था से विमुख और आत्म रक्षा से भी वञ्चित रह जाय। सेना ही नहीं तो राष्ट्र रक्षा, समाज और सरकार की भी रक्षा नहीं।—क्लेमाँशो निर्मल प्रजा भक्त था, इसी लिये शासन का भार लेकर उसे उत्तरदायित्व पूर्वक सुरक्षित रखना ही वह प्रजाहित और सरकारी धर्म समझा था।

मजदूरों ने उसे शत्रु समझा, किसानों ने उसे क्रूर बताया, परन्तु वह अटल कर्मयोगी के समान कर्तव्य पालन में तत्पर रहा। कुछ लोगों ने इसकी अभेद्य दृढ़ता को लेकर

उसे 'डिक्टेटर' के नाम से पुकारा है। वह 'डिक्टेटर' था, परन्तु असत्य और वैयक्तिक प्राबल्य के विरुद्ध, सत्य और सेवा के निर्विघ्न साधनों के लिये।

संसार की गति न्यारी है! मन्त्रिमण्डलों को उखाड़ फेंकने वाले क्लेमाँशो का मन्त्रिमण्डल उखड़ गया,—मोरक्को (अगादीर) के सम्बन्ध में अपने ही आवेश और असंयत भाषण पर। परास्त होकर पृथक होते समय उसने कटु हास्य के साथ कहा—"सरकारों को उलट देना मेरा स्वभाव है अपनी सरकार को भी मैं ने नहीं छोड़ा।"

(१४)

क्लेमाँशो को फ्राँसीसी पराजय की ही उपज कहना चाहिये। दबी हुई वस्तु उभड़ना चाहती है, उसी प्रकार पराजित मनुष्य में विजय लालसा स्वाभाविक गुण बनकर कर्म प्रेरणा करती है। जर्मनी और फ्राँस की इसी पारस्परिक मनोत्क्रिया ने क्लेमाँशो के संघर्ष नीति को प्रभावित किया था। उसकी दार्शनिक वृति और जर्मनी की विश्लेषणात्मक विशेषता में अन्योन्याश्रित प्रतिक्रिया का सूत्र मिलता है।

सेवा और सुधार की आकर्षक परिभाषायें उसके यथार्थवादी मन को लुभा न सकीं थी, स्वतन्त्रता, समानता, और बन्धुत्व के गगन चुम्बी शंख नाद को उसने क्रान्ति का एक आदर्श मात्र समझ कर व्यवहार किया। सत्य और न्याय की सावधानी पूर्वक रक्षा करना वह अपना पवित्र धर्म समझता था। परन्तु दूसरी ओर ?—जर्मनी, न्याय के विरुद्ध, फ्राँस

के उगते हुये पौधे को बलात उखाड़ फेंकने के लिये खड़ा था। क्लेमाँशो ने स्वयं देखा था कि जर्मनी ने फ्राँस को बार बार परास्त और अपमानित किया और शक्ति ने सत्य को ग्रस लिया था, फिर भी उसका आशावादी स्वभाव अपने उद्देश्य से विचलित न हुआ। स्वभावतः जर्मनी के दूसरे आक्रमण से फ्राँस की रक्षा करने के निमित्त वह कटिबद्ध पराक्रम करने लगा। जीवन संघर्ष की उस निर्णायक घड़ी के लिये फ्राँस की शक्ति और सम्पदा को सुसंगठित कर रखना ही उसने श्रेयस्कर समझा। परिणामतः इङ्गलैण्ड के "प्रजावादी साम्राज्य" और जर्मनी के "तानाशाही विस्तार" को एक हो जाने देना फ्राँस के लिये उसने भारी आशंका का कारण समझा—वास्तव में इङ्गलैण्ड और फ्राँस के ऐक्य को ही वह फ्राँस की रक्षा समझ कर कार्य शील हुआ।

मोरक्को का विषय लेकर जर्मनी ने इङ्गलैण्ड और फ्राँस की इस नव जात मैत्री की परीक्षा कर लेना चाहा। ड्रेफस के मामले और जेनरल आँद्रे तार्दू (गत महा युद्ध में फॉक का सहायक फिर फ्राँस का प्रधान मन्त्री) के कैथॉलिकों के विरुद्ध आन्दोलन के कारण थल और जल सेना—दोनों असमञ्जस्य में थे; यदि इङ्गलैण्ड से सहायता मिलने की आशा थी तो दूसरा मित्रराष्ट्र (रूस) जापान से युद्ध कर रहा था। परिस्थियाँ फ्राँस के प्रतिकूल थीं और उसे नत होना पड़ा। विवशतः फ्राँस को जर्मनी के साथ समझौते के लिये अलजेसाइरस (Algeciras) की सभा में अपमान पूर्वक भाग लेने पर बाध्य होना पड़ा। परन्तु इस अपमान ने देश को भविष्य के लिये सावधान हो जाने की अखण्ड प्रेरणा की और परिणतः इङ्गलैण्ड और फ्राँस के सेना विभाग ने

जर्मनी के भावी आक्रमण के विरुद्ध सम्मिलित तैय्यारी प्रारम्भ कर दी। जर्मनी फ्राँस को दबा कर सन्तुष्ट बैठ रहा, सो बात नहीं; वह भी फ्राँस को सदा-सर्वदा के लिये चूर्ण कर देने के लिये एक विराट आयोजन में तत्पर हुआ।

* * * * *

क्लेमाँशो के प्रधान मन्त्रीत्व में जर्मनी ने एक बार पुनः 'एंग्लो-फ्रेंच' मैत्री की परीक्षा की। कासा ब्लैंका में कुछ जर्मन पकड़े गये; जर्मनी ने उन्हें तुरन्त मुक्त करके फ्राँस से क्षमा की माँग की। जर्मनी के बढ़ते हुये साहस को यहीं रोक देना क्लेमाँशो के लिये परम आवश्यक प्रतीत हुआ।

जर्मन राजदूत ने देश लौट जाने के लिये 'पास पोर्ट' की प्रार्थना की; इसका स्पष्ट अर्थ था: सबन्ध विच्छेद और युद्ध। क्लेमाँशो ने घड़ी देखते हुये राजदूत से कहा—"अभी ७ बजे हैं, आपकी गाड़ी ६ बजे जाती है, शीघ्रता कीजिये, वरना छूट जायेंगे"

परन्तु वहाँ किसे जाना था और कौन जाता है ? बंदर घुड़की का यहीं अन्त हो गया।

* * * * *

१९११ ई० मो० प्वायंकेयर फ्राँस के प्रधान मन्त्री थे; अगादीर के मामले में अङ्गरेज सरकार को सूचित किये बिना ही जर्मनी से नया समझौता कर लिया। उस समय क्लेमाँशो ने विरोध करते हुये कहा—"क्या हम जर्मनी की बातों पर विश्वास कर सकते हैं? १८७० ई० से लेकर आज तक उसने बार बार प्रतिज्ञा भङ्ग करके हमें अनुचित रूप से दबाया है और आज हम उसी मदान्ध देश

से समझौता कर रहे हैं। मृतात्माओं ने जीवित सन्तान को जन्म दिया था, जीवित लोग मृत प्राणियों के साथ विश्वासघात नहीं कर सकते। हमें जितना बड़ा देश प्राप्त हुआ उससे छोटा (क्योंकि फ्राँस को समझौते के रूप में अलसेस लोरेन से अपना दावा उठा लेने पर बाध्य किया गया था) फ्राँस इन बच्चों को सौंपते समय हम क्या उत्तर देंगे? क्या हम पिछली घटनाओं को भूल गये हैं? क्या उस दुखद इतिहास की उत्पीड़क अनुभूति शिथिल हो गई है? क्या हम अपने बच्चों को केवल अपनी मौन बेबसी ही भेंट करना चाहते हैं? नहीं, हमें कुछ और कहना है, किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता है, किसी धरोहर की रक्षा करनी है........"

धारा सभा का हृदय हिल गया, मन्त्रिमण्डल का स्तंभ उखड़ गया।

* * * * *

१९११ ई० में जर्मनी ने अगादिर में एक युद्ध पोत भेज कर फ्राँस को भयभीत कर देना चाहा ताकि उसे (जर्मनी को फ्राँस द्वारा) अफ्रीका में आवश्यक सुविधायें प्राप्त हो जायें। परिणामतः झगड़ा समाप्त होते ही, फ्राँस और इङ्गलैण्ड की (जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है) मैत्री ने सुदृढ़ सहयोग का आश्रय लिया। इधर फ्राँस में, सरकार इतनी भयभीत हुई कि उसने सेना को सुसंगठित होने के लिये सम्पूर्ण छूट दे दी,—अब तक सरकार ने सेना को कठोर नियन्त्रण में रक्खा था क्योंकि उसे भय था कि सम्भवतः बागडोर ढीली करते ही वह प्रजातंत्र पर सत्ता न जमा ले। परन्तु आततायी के भय ने उस बन्धन को ढीला कर दिया। सेना ने स्वतन्त्र हो कर प्रजातन्त्र के स्थान में अपने ही ऊपर सत्ता स्थापित की

और फल हुआ आन्तरिक विद्रोह। क्लेमाँशो ने विद्रोहियों को संबोधित करते हुये उस कुव्यवस्था और विद्रोह का बल पूर्वक प्रतिवाद किया—"तुम शस्त्र से पिण्ड छुड़ाना चाहते हो, परन्तु क्या तुम्हारे कानों में जर्मन बन्दूकों का शब्द नहीं सुनाई पड़ रहा है? सावधान! तुम्हारे हृदय का रक्त अश्रु धारा बन जायगा फिर भी इस पाप का धब्बा न मिटेगा। संतरी के अनुत्तरदायित्व से रोम और एथन्स ध्वंसावशेष बन गये, क्या तुम भी कर्तव्य से विमुख होकर फ्राँस को मिटा देना चाहते हो? सावधान! यदि तुम्हें अपने देश, उसके जल-वायु, अन्न, नदी-नाले, बन-पर्वत, जीव-चराचर, किसी की लाज नहीं तो जाओ कलंकित हो कर डूब मरो........।"

"तीन वर्षीय सैन्य सेवा" बिल पास हो गया।

* * * * *

फ्राँसीसी सेना की दशा शोचनीय और गढ़ बन्दी पुरानी तथा अनुपयोगी स्थिति में थी; न तोपखाने थे, न ही तोपों के लिये गोले। सैनिकों के अपर्याप्त जूते, जो थे वह भी पुराने। क्लेमाँशो ने उत्तेजित होकर प्रश्न किया—"देश यह जानना चाहता है कि उसका सैन्य कोष कहाँ उड़ाया गया? बस, बात स्पष्ट प्रकट हो जानी चाहिये।"

प्रस्तुत दशा में फ्राँस वर्षों तक जर्मनी से मोर्चा लेने योग्य न था, फिर भी क्लेमाँशो ने अनन्त आशा के साथ पाँव उठाया। उसकी अगम्य शक्ति दुर्बलता को मिटाने में तत्पर हो गई।

यह था उस अजेय बीर का अगाध साहस!

(१५)

१९१४–१८ ई० गत जर्मन युद्ध

सैन्य बाहुल्य, विशाल तोपखाने, और भयंकर गोलों की मार से फ्राँसीसी सेना जर्मनी से हारती हुई पेरिस के द्वार पर आ लगी। सरकार को पेरिस छोड़ कर बोर्दो में शरण लेना पड़ा। १८७० ई० का लज्जा जनक इतिहास १९१४ * ई० में एक बार फिर दुहराया गया। कुव्यवस्था और वस्तु हीनता का हृदय विदारक दृश्य देख कर क्लेमाँशो से अधिक सहन न हुआ। उसने युद्ध समिति (War Council) की धज्जियाँ उड़ाना प्रारम्भ किया और बार बार आघात किया। 'ल होमे लिब्रे' (आज़ाद वतन) को सरकार ने बन्द कर दिया, दूसरे दिन वही 'ल होमे एञ्चेन' (गुलाम देश) के रूप में प्रकट हुआ। रणभूमि में प्राण देने वालों के अतिरिक्त क्लेमाँशो ने प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक

---

* इसी प्रकार १९४० ई० में भी।

वस्तु पर आघात किया। एक के पश्चात दूसरा मन्त्रिमण्डल छिन्न भिन्न होने लगा। प्रजा का विश्वास कर्णधारों से उठ सा चला।

"बड़ों की ग़द्दारी"—ऐसी ही एक शंका ने प्रजा के हृदय में घर जमाया; लोग क्रुद्ध और उद्विग्न हो गये; हार की आशंका जनक संभावना ने लोगों को आतुर बना दिया।

१६-११-१७ ई० अन्त में निराश और विह्वल प्रजा ने राष्ट्र रक्षा का भार क्लेमाँशो को सौंपा,—७६ वर्ष का बूढ़ा चीता पुनः प्रधान मन्त्री बना।

देश को पतवार हाथ में लेते ही वह तूफान में पड़े हुये नाविक के समान साहसी और कठोर बन गया,—उसकी आत्मा और बुद्धि ने जैसी प्रेरणा की, उस पर वह निष्पक्ष निर्दयता के साथ अग्रसर हुआ। कल वह विचार स्वातन्त्र्य के लिये लड़ रहा था, आज उसी ने स्वयं लोगों की ज़बान को बन्द कर दिया। जिन लोगों ने उसके कन्धे से कन्धा मिला कर लोहा लिया था, उन्हीं को समय के विरुद्ध पाकर उसने न्याय दण्ड पर भेंट चढ़ा दिया। समाजवादी और "अग्रसर" समुदाय (Radicals) के रक्तिम विरोध के विपरीत भी वह अटल 'डिक्टेटर' के समान उद्देश्य सिद्धि में तल्लीन हो गया। वहाँ आदर्श विवेचन और सैद्धान्तिक विवाद का समय न था,—समय था जर्मन विध्वंस से देश को बचा लेने का ; हिंसा का उसने प्रतिहिंसा से ही उत्तर देना सीखा था।

क्लेमाँशो के मन्त्री होते ही सेना में आशा और भय—दोनों का एक साथ समावेश हुआ। समस्त सैन्य समुदाय पर विदित था कि अपराध, अयोग्यता, या असावधानी की स्थिति में क्लेमाँशो बड़े से बड़े सेना नायक को भी दण्ड बिना नहीं

छोड़ेगा—उसकी तानाशाही और कठोरता से सभी परिचित थे। आशा थी कि क्लेमाँशो के होते हुये उनके सैन्य पराक्रम में उन्हें देश का निष्कलंक और निर्विछिन्न सहयोग प्राप्त होगा।

रूस उखड़ कर क्रान्ति को समर्पित हो चुका था। इटली कापोरेतो की पराजय से उत्पीड़ित था। अमेरिका की सहायता अब भी "दिल्ली दूर है" के समान थी। जर्मनी की मानव बाढ़ सशस्त्र प्राबल्य के साथ फाटक पर फाटक तोड़ती जा रही थी। फ्राँस को इस समय उन लोगों की आवश्यकता नहीं थी जो देश को झूठी आशाओं द्वारा एक के पश्चात दूसरी ग्रंथि में फंसाते जा रहे थे। आवश्यकता थी एक ऐसे सुदृढ़ नेता की जो युद्ध क्षेत्र और गृह दशा की सत्य अनुभूति से प्रजा को उद्धार पथ पर लगा दे। पद ग्रहण करते ही क्लेमाँशो ने देश पर प्रकट कर दिया कि विवक्षित नेता ने नेतृत्व का भार उठा लिया था। मन्त्रि मण्डल की स्थापना करते ही क्लेमाँशो ने स्पष्ट कह दिया कि "लोगों के सम्मुख केवल एक ही प्रश्न है: "युद्ध और विजय।" उसने कहा--"न्याय के लिये हमें विजय प्राप्त करनी होगी। हमारे सैनिक सुदृढ़ और विश्वस्त नेतृत्व में प्राणों का प्रतिहार कर रहे हैं,--हम उनके ऋणी हैं। हमें तनमन धन से उनके पीछे खड़ा हो जाना चाहिये। रणभूमि और देश—दोनों एक हो गये हैं, और इस समय समाज या सम्राट वादी, कोई नहीं, हम केवल फ्राँसीसी हैं। हमारा एकमात्र धर्म है: मान मर्दित फ्राँस को विजय वेदी पर मूर्तिमान करना। अमानुषिकता का संहार चक्र नव रूप, नव रीति से पृथ्वी को क्षार कर रहा है, अतएव हमारा कर्तव्य है कि मतभेद त्यागकर हम उसे समूल नष्ट कर दें ....।"

लड़खड़ाते हुये पाँव जम गये; समाजवादी और अग्रसर दल—सब ने एक साथ विजय यज्ञ रचाया।

क्लेमाँशो ने शंका शील प्राणियों का दूसरे दिन उत्तर देते हुये कहा—"युद्ध के मध्य में आप शान्ति की चर्चा कर रहे हैं। मेरा मत है कार्य के समय बात करना अनुचित है। आप राष्ट्र संघ बनाने की सलाह दे रहे हैं, जिसमें जर्मनी भी होगा। उस अविश्वसनीय देश का क्या भरोसा? उसकी ज़मानत क्या है? उसी के हस्ताक्षर? ऐसे हस्ताक्षर का मूल्य क्या हो सकता है, बेल्जियम से पूछिये। ऐसी ज़मानतों का ब्योरा स्वयं जर्मनी की गत कार्य्यवाहियों से मिलेगा। नहीं, मैं ऐसे राष्ट्रसंघ में विश्वास नहीं करता। मैं नहीं चाहता कि असत्य और ग्रन्थि माया में पथ भ्रष्ट होकर मानव समाज रक्त और धूलि में लोटता रह जाय। मैं इस समय युद्ध करना चाहता हूँ, युद्ध ....।"

यह थी युद्ध की रण दुन्दुभि ! आहत की प्रतिकार लालसा !

समाजवादियों ने शंका उठायी कि युद्ध के पश्चात फ्राँस जर्मनी पर अन्याय और अनुचित शर्तों का बोझ लाद देगा। क्लेमाँशो ने कहा—"क्या आप विश्वास करते हैं कि अमेरिका अपने बच्चों का रक्त बहाकर हमें अनीति पर उतरने देगा? कभी नहीं। इस समय न्याय और नीति की चर्चा करना असामयिक है। हम युद्ध कर रहे हैं, विजय कोसों दूर है—इस कुसमय में सुलह और शर्तों की बात करना सर्वथा अनीति होगी। त्यागिये इन कुतर्कों को।"

एसक्विथ का त्याग, ब्रियाँ का चतुर साधन, जॉफ़रे का आशावाद, पेताँ की सावधानी, हिन्डेन बर्ग का वैज्ञानिक प्रभुत्व—कहीं युद्ध का हल दृष्टि गोचर न हुआ। अब क्लेमाँशो,

एक समालोचक क्रान्तिकारी, साथी बना था। देश में लोग उससे भयभीत थे, घृणा करते थे; रण नायकों से उसका सैद्धान्तिक विरोध था। वह स्वयं जीवन समस्याओं में उलझ कर वृद्ध हो गया था। परन्तु उसके पास अतुल साहस का भण्डार था,—उसने अतीत के विभोर में भविष्य का संघर्ष प्रारम्भ किया।

मानव माहात्म्य के लिये वह रण चण्डी का उपासक बना!

क्लेमाँशो का संघर्ष फ्राँसीसी प्रजा का एक अन्तिम प्रयोग था। उसकी पराजय का अर्थ था फ्राँस का नाश। स्वभावतः वह धीर, बीर, अटल योद्धा के समान, युद्ध द्रवित सशंक समुदाय को लेकर पराजय को विजय में परिवर्तित करने बढ़ा। सारे देश, सारी सेना में गति और कार्य का प्रादुर्भाव हुआ। मार्ग को विघ्न बाधायें निर्दयता पूर्वक उखाड़ कर फेंक दी गयीं। दो महीने भी नहीं बीते कि एक बार पुनः आशा का संचार हुआ।

वह था एक सिद्ध कर्मयोगी, साक्षात संघर्ष मूर्ति, संघर्ष कालीन देश का प्रधान मन्त्री, क्लेमाँशो!

वह प्रजा भक्त पुरुष, उद्देश्य साधन के लिये एक अपूर्व 'डिक्टेटर' बन कर अग्रसर हुआ!

(१६)

शक्ति के सिंहासन पर पदासन्न होते ही क्लेमाँशो ने देश की आशाओं को सत्यता पूर्वक चिरतार्थ करने की प्राण पण से चेष्टा की। प्रजा उस पर नेत्र लगा कर उद्धार की प्रतीक्षा करने लगी,—उस महान उत्तरदायित्व को उसने उतनी ही कठोरता से निभाने का प्रण किया। उसके उद्दाम साहस को देखकर दुर्बल हृदय और पापात्मायें दहल गईं।

धारा सभा के सम्मुख उसने भयास्पद गर्जना के साथ कहा—"आज सारी प्रजा एक मुँह से कह रही है कि 'लाखों भेड़ बकरी के समान कट रहे हैं परन्तु राजनीतिज्ञ लोग वाद विवाद में दिन काट रहे हैं;' स्त्रियों का कहना है कि 'राजनीतिज्ञ समुदाय पारस्परिक रक्षा की चिन्ता में है।' मैं कदापि नहीं देख सकता कि प्रजातन्त्र की पवित्रता को इन पापमयी शङ्काओं से कलुषित कर दिया जाय। हमें निर्मम न्याय और निर्भय दृढ़ता के साथ कार्य शील होना पड़ेगा। बस इसी में हमारी रक्षा है......।"

बोलो, कैलॉक्स (पूर्व प्रधान मन्त्री), मैल्वी (गृह मन्त्री) हम्बर्ट ('ले जर्नल' के मालिक और सिनेट समिति के भूतपूर्व प्रधान) एक एक को न्याय दण्ड पर भेंट चढ़ा दिया गया। अब सेना को विश्वास करने में बाधा न रही कि उनका गृह देश द्रोहियों से सुरक्षित था। गृह भेदियों की चिन्ता से मुक्त हो कर सैनिकों में नव साहस, नव बल का सञ्चार हुआ। कुव्यवस्था और सैन्य विद्रोह के स्थान में संगठित संघर्ष और उद्देश्य निष्ठा का उदय हुआ।

क्लेमाँशो ने दुर्बलता और देश द्रोह के मूलोच्छेदन के साथ ही सैन्य साधन और गृह प्रबन्ध का भी कार्य क्रम प्रारम्भ कर दिया। देश के प्रत्येक युवक को सैन्य शिक्षा द्वारा युद्ध के लिये प्रस्तुत किया गया। 'हज' के लिये रूस भाग जाने वाले समाज वादियों को रोक दिया गया। मिठाई और चाकलेट आदि की दूकानें बन्द करके आवश्यक भोज्य पदार्थों पर ही ध्यान केन्द्रित हुआ; नया कर लागू किया गया। संक्षेप में, सारे देश को ही युद्ध क्षेत्र समझ कर संगठन और व्यवस्था का विधान हुआ।

कुछ लोगों ने झूठा आरोप किया है कि क्लेमाँशो लोक प्रियता का इच्छुक था। वास्तव में वह इन कुभावनाओं से सदा दूर ही रहा। उसके जीवन को देख कर हम यही कहेंगे कि वह तो प्रजा की दृष्टि से भी वञ्चित रहना चाहता था। धारा सभा या वैयक्तिक सम्पर्क में भी उसने एक क्रूर शुष्कता का व्यवहार किया,—लोक प्रियता के लिये लालायित प्राणी क्या ऐसा ही करते हैं? परन्तु आश्चर्य तो यह है कि प्रजा ने फिर भी उसे देव तुल्य श्रद्धाञ्जलि दी। प्रजा और सेना के बिखरे हुये तार मिल गये, देश प्रेम की दुग्धधारा उमड़ चली।

फ्राँस की राजनैतिक अस्थिरता को देख कर मित्र राष्ट्रों ने अब तक सेना का सम्मिलित संचालन किसी फ्राँसीसी सेना-पति को सौंपने में एक अरुचिकर विरोध ही किया था परन्तु क्लेमाँशो ने सहज ही सिद्ध कर दिया कि फ्राँस की सरकार प्रत्येक रूप से सुदृढ़ थी, प्रत्येक उत्तरदायित्व का योग्यता पूर्वक सम्पादन कर सकती थी। उसने सफलता पूर्वक मित्र राष्ट्रों पर विदित कर दिया कि उसकी सेना के पीछे देश की श्रद्धा और सरकार की शक्ति थी।

फलतः फॉक * को मित्र राष्ट्र का प्रमुख सेना पति नियुक्त किया गया।

* "फॉक" का उच्चारण "फोच" भी किया जाता है, परन्तु मैं ने "फॉक" ही ठीक समझ कर सर्वत्र ऐसा ही व्यवहार किया है।

(१७)

ड्रेफ़स के मामले ने सरकार और सेना के हृदयो में पारस्परिक शंका की एक अनिच्छित भीत खड़ी कर रक्खी थी,—प्रजावादियों ने सैन्य मण्डल को पोप-पंथी तथा प्रतिकृत पुरातन वादी समझा और सेना समझती थी प्रजावादी राजनैतिक हस्तक्षेप द्वारा उसके अनुचित नियन्त्रण को इस विषम दुबिधा में राष्ट्रीय संगठन और शासकीय व्यवस्था आहत होती जा रही थी। फ्राँस नाश के मुख में लोप हो जाना चाहता था। निवेली के पराजय (१९१७ ई०) में इसी अनुचित हस्तक्षेप का प्रमाण दिया जाता है।

'धारा धोरण' (Legislation) और रण भूमि का जटिल उत्तरदायित्व—दोनों एक ही बात नहीं। क्लेमाँशो के पद ग्रहण करते ही राजनैतिक हस्तक्षेप मिट गये। सेना नायकों को शक्ति और सहयोग मिला, उदारता और निर्विघ्न मार्ग!

परन्तु इन सारे प्रयत्न और सावधानी के विपरीत भी देश पराजय भावनाओं से मुक्त होता नहीं दीख रहा था। निरन्तर गिरफ्तारियाँ हो रही थीं ; अग्रसर और समाज वादियों का "शाँति" का प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया। क्लेमाँशो ने पराजय का बोझ सेना नायकों पर लाद कर स्वतन्त्र हो जाना अस्वीकार कर दिया। लोगों के लाख हो-हल्ला पर भी उसने फॉक को निर्दोष बताया। उसने कहा—युद्ध क्षेत्र में उत्तर या अनुत्तर-दायित्व का किसी एक व्यक्ति को दोषी ठहराना कठिन है। देश का भार लेकर रण क्षेत्र में लड़ने वालों पर आघात करना कायरता है ....।"

क्रान्तिस्थ रूस के युद्ध से हट जाने के कारण जर्मनी ने पूरब से निश्चिंत होकर पश्चिम में सबल आक्रमण किया। अन्य अनेक कारणों में से यह भी एक मुख्य कारण था जिससे मित्र राष्ट्रों का जमाव उखड़ गया,—इसमें फॉक का नहीं, परिस्थिति का दोष था। क्लेमाँशो ने कहा—"हमारे वीर सैनिक वीर नेतृत्व में लड़ रहे हैं।" शान्ति के भक्त तथा वाम मार्गियों के विरोध का प्रत्युत्तर देते हुये उसने बार बार उसी वाक्य को दुहराया। अन्त में उसने कहा—"यदि मुझे सभा का सहयोग प्राप्त रहा तो मैं जर्मनी को परास्त करके ही रहूँगा।"

सभा और देश—दोनों ने निःशंक होकर उसका साथ दिया। इस निश्चय में समस्त देश की स्वीकृति थी, जिससे प्रेरित और प्रोत्साहित हो कर सेना के सैन्य पराकर्म ने जर्मनी का मुँह फेर दिया।

अन्त में आततायी परास्त हुआ !

पराजित जर्मनी पर वार्साई की कठोर शर्तें लाद दी गयीं। इतने पर भी फ्राँसीसी सेना नायकों ने क्लेमाँशो पर

नम्रता का दोषारोपण किया है। विचित्र विडम्बना है ! फ्राँसीसी दृष्टि में वह नम्र था; उन्हों ने असन्तुष्ट होकर कहा—इङ्गलैण्ड और अमेरिका का समझौता मोल लेने के लिये क्लेमाँशो झुक गया है,—तानाशाही मन्त्री को दुर्बल और नम्र पुकारा गया। दूसरी ओर अङ्गरेज और अमेरिकन लोग चिल्ला रहे थे—"क्लेमाँशो की असहिष्णु और कट्टर देश-भक्ति ने सन्धि को कठोरतम बना दिया है।"

परन्तु सन्धि कालीन निराशा, पारस्परिक मतभेद तथा आन्तरिक द्वेष की दुखद घड़ियों को अन्तिम क्षण तक सफलता पूर्वक निभाते हुये क्लेमाँशो ने कहा—"मैं ने सन्धि की शर्तों को पढ़ कर सुना दिया। अब मेरा कार्य समाप्त हुआ।"

जिस कठोर तानाशाही के साथ उसने युद्ध का संचालन किया, उसी एकाकी तत्परता के साथ उसने इस शान्ति और सन्धि की भी रचना की; धारा सभा, प्रधान, फॉक, कोई उसके निर्माण में परामर्श या हस्तक्षेप न कर सका।

उस दिन फ्राँस ने गर्व पूर्वक जर्मनी से १८७० ई० का बदला लिया था।

(१८)

जर्मन प्रतिनिधि युरोप की शान्ति और विकास योजना में सम्मान पूर्वक समान भाग लेने आया था। मित्र राष्ट्र की शर्तों ने उसे मृतप्राय सा कर दिया।

क्लेमाँशो ने प्रतिकार पूर्वक जर्मन प्रतिनिधि को सन्धि की शर्तें पढ़ कर सुनाई। लायड जार्ज उस क्षण चश्मे के फ्रेम से संज्ञाहीन खेल कर रहे थे। बात किसी से छिपी न रही कि उस निर्दय अपमान को जर्मनी शीघ्र अति शीघ्र तलवार की धार पर मिटा कर ही रहेगा।

लायड जॉर्ज ने बार बार कहा था—"आज हम शान्ति की स्थापना कर रहे हैं, परन्तु कल पुनः दूसरे महायुद्ध की तैय्यारी कर रखनी चाहिये।"

क्लेमाँशो की स्थिति विचित्र थी : एक ओर इङ्गलैण्ड और अमेरिका का दबाव कि फ्राँस की शर्तें अनुचित रूप से कठोर थीं, दूसरी ओर फॉक का विद्रोह कि क्लेमाँशो अङ्गरेजों को प्रसन्न करने के लिये फ्राँस को ही भूल रहा था।

अन्त में फ्राँस को राइन देश पर अधिकार प्राप्त हो गया।

इतना सब होने पर भी सिनेट ने लांछन लगाया कि क्लेमाँशो ने जर्मनी के राष्ट्र संगठन को नष्ट नहीं कर दिया। क्लेमाँशो ने नैतिक और ऐतिहासिक प्रमाण देते हुये कहा—"भले ही जर्मनी में आन्तरिक मतभेद हो, बाह्य हस्तक्षेप के समय वह सब एक हो जायेंगे।" वह विश्वास भी नहीं कर सकता था कि जर्मन राष्ट्र को भिन्न भिन्न टुकड़ों में विभक्त कर देना उचित या हितकर था ❀।

क्लेमाँशो को रत्ती भर भी विश्वास न था कि वार्साई सन्धि एक स्थायी योजना थी—फ्राँसीसी या अन्तर राष्ट्रीय, किसी दृष्टि कोण से भी नहीं। यही कारण है कि वह राइन प्रान्त पर अधिकार करके रोग का बल क्षीण करना चाहता था। वह समझता था वार्साई सन्धि "केवल कागज़ी कार्य्यवाही" रह जायगी क्योंकि उसका आधार "निरन्तर चौकीदारी" और "अन्तर राष्ट्रीय समझौतों पर अवलम्बित था।" उसके विचार में वार्साई भविष्य की प्रारम्भ शिला थी, न कि भूत का अन्तिम पड़ाव। उसने सन्धि पत्र को सिनेट की स्वीकृति के लिये रखते हुये कहा—'शान्ति एक शस्त्र हीन युद्ध है। एक एक बात के लिये धारा और उपधाराओं का जंगल लिये हुये यह सन्धि वैसी ही सिद्ध होगी जैसे आप इसे बर्तेंगे।"

१७-१-२० सन्धि की दुखद घड़ियाँ समाप्त हुईं। सिनेट का नया चुनाव आया। क्लेमाँशो इस बार खड़ा

❀ कुछ लोगों का प्रयत्न था कि जर्मनी से एक राष्ट्र के आधार पर नहीं, उसके विभिन्न भागों से पृथक पृथक सन्धि और समझौता हो।

नहीं हुआ। यहाँ उसका ५० वर्षीय राजनैतिक जीवन भी समाप्त हुआ।

राजनीति से निकल कर वह एक बार पुनः प्रशान्त अध्ययन और साहित्यिक अध्यवसाय में लीन हो गया। वह वीर राजनीतिज्ञ से भी बड़ा साहित्यिक था।

१९२९ ई० संसार का कार्य क्रम समाप्त करके वह शान्ति पूर्वक वीर-लोक को सिधार गया।

आज फ्राँस पुनः पद दलित हुआ है। क्लेमाँशो की आत्मा इतिहास के पन्नों से बोल रही है—"देखो, मैं ने क्या कहा था?"

मार्शल फाक

(१८५१ ई०—१९२९)

फ्रांस का प्रमुख सेनापति, १९१४-१८ ई० के जर्मन युद्ध में समस्त मित्र राष्ट्र के सैन्य व्यूह का सञ्चालक तथा अध्यक्ष, जर्मनी द्वारा निरंतर पद-दलित फ्रांस को, नेपोलियन के पश्चात्, एक बार पुनः विजय वेदी पर स्थापित करने वाला, मानव इतिहास का एक श्रेष्ठ सैनिक !

"फाक" (Foch) का उच्चारण कुछ लोग "फोच" भी करते हैं ।

(१)

मार्शल फाक को फ्रांसीसी सैन्य पराक्रम का उसी प्रकार सजीव चित्र समझना चाहिये जैसे क्रेमाँशो का जीवन फ्रांसीसी राजनीति का एक अंग था।

२-१-१८५१ ई० क्रांति कालीन फ्रांस के "राष्ट्र-रक्षक" (National Guaid) "कैप्टेन-काउन्सिलर" दामिनी फाक के पौत्र फर्दिनाँ फाक ने १० बजे रात्रि में माता के गर्भ से उत्पन्न होकर अपना जन्म सफल किया।

फाक का वंश फ्राँस के अन्य अनेक मध्य श्रेणी के परिवारों में से एक था ; अतएव उस मार्शल शिशु का बाल्यकाल साधारण हो रहा। परंतु, वैयक्तिक दृष्टि से 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली लोकोक्ति असत्य न होने पाई ; गुरुदेव ने उसकी प्रखर बुद्धि पर निर्णय दिया – 'रेखा गणितज्ञ का मस्तिष्क है। बहुगुणी (Polytechnician) होगा।'

फाक जितना लोक प्रिय नहीं था, उससे अधिक वह प्रभावशाली विद्यार्थी था। दूसरे वर्ष स्कूल भर में "Grand prix de sagesse" (कुशाग्र) चुना जाना इसका मुख्य कारण है।

१८७० ई० पुष्ट बालक धीरे-धीरे १९ वर्ष का युवक हो गया। जर्मन आक्रमण ने उसकी शिक्षा-दीक्षा

को अस्त-व्यस्त कर दिया ; सेनायें दल-बल सहित एक दूसरे की ओर बढ़ने लगीं। ऐसे काल में फाक परीक्षा भवन में था। कठिन समय में फाक का ध्यान स्वभावतः प्रश्न-पत्रों से हटकर निकट ही रण-भूमि में विचरने लगा। प्रश्न-पत्रों के अतिरिक्त, उसके मन ने एक नवीन प्रश्न किया—'यह सारी शिक्षा और परीक्षा किसलिये ?' तत्काल ही उसके अन्तरात्मा ने उत्तर भी दे दिया—'बहुगुणज्ञ' (Polytechnician) सरकारी नौकरी के लिये नहीं, सैनिक बनने के लिये ही हुआ हूँ।'

❀ ❀ ❀ ❀

फ्राँस परास्त हुआ ; देश पद-दलित हो गया। कालेज बन्द होते ही भयभीत और व्याकुल मानव बाढ़ के साथ फाक ने भी पेरिस के लिये गाड़ी पकड़ी। घर पहुँचते ही वह "चौथी सेना" (Fourth Regiment of the cine) में एक साधारण सैनिक के समान भर्ती हो गया। 'बहु-विज्ञान' (polytechnic) का लाक्षणिक अध्ययन छोड़ कर अब वह बंदूक और संगीन की क़वायद (परेड) में लगा, यह था उस भावी मार्शल का देश प्रेम !

फॉक फ्राँसको परास्त और अपमानित नहीं देख सकता था।

हृदय की बात हृदय में ही रह गई। उसके बंदूक चलाने के पहिले ही युद्ध समाप्त हो गया। उसका एक परम मित्र उससे भी पूर्व रण-भूमि में मारा गया : फाक ने संतोष के साथ कहा—"धन्य है, वह श्रेष्ठ गति ! भला कौन ऐसी पवित्र मृत्यु की लालसा न करेगा ?" मित्र की आत्मा को संबोधित करते हुये उसने कहा—"वीर वर ! तुम्हारे प्राणों का प्रतिकार भरपूर होगा।"

युद्ध समाप्त होने पर अतिरिक्त सेनाओं की आवश्यकता न रही। मार्च १८७१ ई० में उन्हें तोड़ दिया गया, फाक भी सेना से मुक्त होकर घर आया, परन्तु इन थोड़े से ही दिनों में उसने सैनिक दुर्दशा और उसकी सञ्चालित कुव्यवस्था का अत्यंत, कटु अनुभव कर लिया था। विशेषतः सेना में सुशिक्षा का अभाव उसे बहुत ही अखरा।

वह पुनः कालेज में प्रविष्ट हुआ, परंतु 'बहु गुणज्ञ' नहीं, एक सुशिक्षित सैनिक बनने के लिये।

वह सैनिक बनना चाहता था, देश को पराजयता के कलंक से मुक्त करने के लिए—

(२)

११-५-१८७१ ई० तोप दगी; सारा स्कूल हिल गया। यह किसी के बताने की बात न रही कि फ्राँस ने आल्सेस और लोरेन प्रांत जर्मनी को सौंपते हुए संधि पत्र पर हस्ताक्षर कर दिया था।

पराजय और अपमान के दुष्परिणामों ने समस्त वायु मण्डल को व्याप्त कर लिया। विद्यार्थी खड़े हो गये; शिक्षक ने उठकर कहा—"बालको!"—इसके आगे उनसे बोला ही न गया। शोक से शिर झुकाए हुए गुरुदेव कर-बद्ध, मूर्तिमान खड़े रह गए। उफ़ वह दुःखद दृश्य! फाक क्या कभी भूल सकता था?

❀ ❀ ❀ ❀

फाक लोरेन (नैन्सी) में 'एन्ट्रेन्स' की परीक्षा देने आया यहाँ फ्रांसीसी वाद्य के स्थान में जर्मन बैण्ड (सैन्य वाद्य)

सुनाई पड़ा। देश की छाती पर विदेशी वादन? भला एक देश भक्त कब सहन कर सकता था? फाक ने उत्पीड़ित होकर कहा—आलसेस-लोरेन वापस लेने होंगे, और तब फ्राँस को कोई पुनः परास्त न कर सकेगा। मैं स्वयं देश को मुक्त कराऊंगा।"

यह थी एक सच्चे देश भक्त की पवित्र प्रतिज्ञा। उसी प्रतिज्ञा ने फाक के ४० वर्ष के लम्बे जीवन को आदर्श बना दिया। यहाँ हम उसी दृढ़ प्रतिज्ञ मार्शल फाक की चर्चा कर रहे हैं।

५-११-१८७१ ई० 'पाली टेकनिक' (बहु विज्ञान) की कक्षायें पुनः प्रारम्भ हुई। परंतु पराजय पीड़ा और गृह युद्ध (सैन्य समुदाय और समूह वादियों* के मध्य) की दुःखद स्मृतियाँ स्कूल की दीवारों पर गोलियों के चिन्ह सजीव रूप में वर्तमान थे। भला कौन युवक था जो ऐसी नीरस अशांति में शांत शिक्षण का लाभ लेता।

फ़रवरी १८७३ फ्रांसीसी सेना का पुनः संगठन प्रारम्भ हुआ; तोपख़ाना और इञ्जीनियर्स विभाग से अधिकारियों की माँग आई। परिणामतः फाक तोप खाने में नियुक्त हुआ।

सितम्बर १८७८ कप्तान बनाकर उसे १० वीं सेना के तोपख़ाने में रेने भेज दिया गया। रेने उसे विशेष रूप से फल दायक सिद्ध हुआ—यहीं ब्रितानी प्रांत की, एक सुंदर सुकुमारी ने उसे अपना प्रेमी चुना।

---

* १८४८ ई० में फ्रांस में पञ्चायती राज स्थापित हुआ था, परंतु सेना तथा सनातनियों की निर्दयता ने उसे क्रूरता पूर्वक उखाड़ फेंका।

१८८१ ई० कप्तान फाक ने उस प्रेमिका को वरण कर अपनी गार्हस्थिक सुरुचि का प्रमाण दिया।

१८८५ ई० वह 'फ्रेञ्च-स्टाफ-कालेज' में भर्ती हुआ। वहाँ के अधिकारी वर्ग फाक की कुशलता और कुशाग्र बुद्धि से शीघ्र ही प्रभावित हो गये।

१८९० ई० वह 'थर्ड-ब्युरो-आव-जेनरल स्टाफ' (रण-भूमि और सैन्य नीति का अंतरङ्ग) में बुला लिया गया।

उपरोक्त तिथियों के गति-क्रम को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि वह सनातन शिविर में एक नूतन आवेग से ऊपर उठता जा रहा था। फाक ने स्वयं लिखा है—"वह (जेनरल स्टाफ) दक़ियानूसी थे और मुझे क्रांतिकारी समझते थे।

सैनिक प्रणाली की विशेषता है कि अपने अग्रसर विचारों को कार्यान्वित करने के लिये मनुष्य को पुरातन नीति में निपुण होना चाहिये। फाक रणयोजना से अधिक महत्व सैन्य तत्परता को देता था; लोगों ने देखा कि वह अच्छे से अच्छे 'ड्रिल-मास्टर' से भी अच्छे ड्रिल का ज्ञाता था। स्वभावतः लोगों ने उसकी सत्ता को स्वीकार कर लिया।

१८९१-१८९५ ई० अद्भुत सैन्य-सञ्चालन के उपलक्ष में वह मेजर पद को प्राप्त होकर युद्ध-विभाग के बाहर, सैनिक नियुक्ति पर आया। परंतु '९४ ई०, में उसे पुनः युद्ध विभाग में लौटना पड़ा। '९५ ई० में वह "सैन्य-विद्यालय" का सहायक प्रो० नियुक्त हुआ।

इस उन्नति में फाक की प्रतिभा फ्रेञ्च इतिहास में एक अकाट्य गति से आच्छादित करती हुई दृष्टि गोचर होती है।

(२)

फाक के सैन्य सिद्धांतों में क्लास विज़* की प्रेरणा जीवमान है। सैन्य विद्यालय में फाक ने क्लास विज़ियन विचारों (Theories) का विराट रूप और स्पष्टीकरण किया। वह कहता था "शत्रु को परास्त करने के लिये उसकी मुख्य सेना को नष्ट करना पहिला कर्तव्य होना चाहिये। प्रत्येक निर्णय युद्ध द्वारा ही सिद्ध होता है।" यही कारण है कि उसने अन्य सामुद्रिक, आर्थिक इत्यादि—बातों को अवहेलना की दृष्टि से देखा। कुछ लोगों ने—विशेषतः वर्तमान परिस्थिति तथा उसकी परिणामिक युद्ध नीति को ध्यान में रखते हुये—फाक की नीति को संकुचित बताया है, यहां तक विरोध पक्ष ने नेपोलियन के १७९६ ई० वाले युद्ध का उदाहरण देकर (जहाँ नेपोलियन ने बिन लड़े ही विजय प्राप्त की थी) फाक के सिद्धांत का तीव्र प्रतिवाद किया है। कुछ भी हो, फाक का 'गुरु-गौरव' क्लासविज़ियन सिद्धांतों के विस्तार और सुदृढ़ प्रचार में ही है। फाक ने सेना को सदा सेना नायकों के रूप में देखा है। "नायक के लिये सेना उसी प्रकार है जैसे सैनिक के लिये तलवार।

* प्रूशियन सेना का सैनिक शिक्षक जिसे समस्त युरोप ने गुरु रूप में स्वीकार किया था।

तलवार का महत्व उसी क्षण तक रहता है जब तक उसमें सैनिक की कार्य प्रेरणा हो।" परंतु विचारणीय बात यह है कि फाक ने नायक की दृढता को सुदृढ़ करने पर ज़ोर दिया, न कि विरोधी नायक की दृढ़ता को नष्ट और व्यर्थ सिद्ध करने पर। हम नहीं कह सकते कि यदि फाक इस समय जीवित होता तो वह हिटलर के "पञ्चम-वर्ग" (fifth Column) अथवा रूसी 'पारा शूट-सेना'* (Parachute Army) को देखकर अपने मत में क्योंकर परिवर्तन किया होता। निःसंदेह यह आश्चर्य की बात है कि वह नैतिक बल में विश्वास करके भौतिक साधनों के महत्व को भूल-सा गया। अतएव, शस्त्र प्राबल्य और उनके निरंतर विकासानुक्रम पर उसका व्यावहारिक मत प्राप्त होना, दुष्कर सिद्ध हुआ है। उसी प्रकार सैन्य-सञ्चालन और रण-नीति पर हमें उसका कोई ऐसा मत भी नहीं उपलब्ध है जिसके द्वारा हम वर्तमान परिस्थितियों में कोई विशेष सहायता ले सकें। फलतः १९१४-१६ के जर्मन युद्ध में यदि वह जर्मन बाढ़ के सम्मुख एक प्रकार से अतत्पर पाया गया तो हमें विस्मित होने की आवश्यकता नहीं। यह कहने में दोष नहीं कि असाधारण परिस्थितियों में भी पड़कर उन्हें धीर-वीर योद्धा के समान सफलता पूर्वक निभा देने में ही फाक का लोकप्रिय महात्म्य है।

आत्म रक्षा और विरोध (Defense and resistence) दृष्टि से फाक की रण-नीति सराहनीय सिद्ध हो सकती है

* दोनों ही आंतरिक अराजकता और 'पिष्टाक्रमण' (State in thecack) द्वारा नैतिक ह्रास के कारण सिद्ध हुये हैं और विजय मार्ग को सुगम बनाने में अचूक सहायता दी है।

परंतु साथ ही साथ वह एक ऐतिहासिक प्रेरणा के अंतरगत कार्य कर रहा था—१८७० ई० में फ्राँस जर्मनी द्वारा परास्त हुआ ; उस समय भी फ्राँस ने आत्म-रक्षक (Defnsive नीति का अनुसरण किया था । सैनिक विशेषज्ञों ने उसे फ्रांसीसी पराजय का मुख्य कारण बताया है। फाक ने भी उसी विश्लेषण को स्वीकार किया था, अर्थात आत्म रक्षक के स्थान में आक्रमण कारी (Offensive) नीति की आवश्यकता अनुभव करके उसका प्रचार और सञ्चार फाक की रण नीति बन गई। परंतु, लघुलपेट यह है कि उसने आक्रमण के आवश्यक अङ्गों पर समुचित ज़ोर नहीं दिया। वर्तमान युद्ध को देखकर (जेनरल गाम्लिन, मार्शल पेताँ, कर्नल वेगाँ) कुछ लोग मनोवैज्ञानिक शंका करने लगे हैं कि फ्रांसीसी मनोवृत्ति ही आक्रमण कारी की अपेक्षा आत्म रक्षक अधिक है, और संभवतः फाक की आक्रमणकारी नीति परिस्थति-भूत अस्वाभाविकता थी जो स्वाभाविक (Natural) आक्रमण कारी नीति की विशेषताओं से वञ्चित मालूम होती है।

अस्तु इस विषय पर एक निश्चित मत प्रकट करने का अवसर नहीं है, परंतु घटनाओं को देखकर अनुमान लगाना अनुचित नहीं कि फ्रांस के जातीय आत्म-रक्षक स्वभाव ने हिटलर को पूर्व से निश्चित होकर पश्चिम में सुविधानुसार सबल आक्रमण करने का एक प्रकार से यथेष्ट अवसर प्रदान किया। फ्रांस के प्रमुख सेनापति जेनरल गाम्लिन और इङ्गलैण्ड के गत प्रधान मंत्री स्वर्गीय चैम्बरलेन पर यही दोष सिद्ध करने का प्रयत्न हुआ है। अस्तु, फाक ने आत्म-रक्षा और आक्रमण के मध्य

एक प्रकार से सामञ्जस्य करते हुये कहा—"आक्रमण करने के पूर्व शत्रु को "केन्द्रित" कर लेना चाहिये।" फाक को इस प्रत्यक्ष आक्रमण नीति ने अप्रत्यक्ष आक्रमण की सम्भावनाओं को गौण-सा कर दिया और साथ ही साथ शत्रु की विरोध शक्ति को भी उपेक्षित दृष्टि से देखा। समय आने पर स्यात् यह स्पष्ट रूप से सिद्ध किया जा सकेगा कि वर्तमान युद्ध में इङ्गलैण्ड और जर्मनी के एक दूसरे पर अप्रत्यक्ष आक्रमणों ने प्रत्यक्ष से अधिक प्रबल आघात किया है। अतएव, सैन्य विशेषज्ञों का कहना है कि फाक की नीति ने "आत्मरक्षक-आक्रमण" की महत्व पूर्ण सम्भावनाओं पर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया। आत्म-रक्षक आक्रमण में प्रथम तो शत्रु की शक्ति उसके अपने आक्रमण में ही क्षीण हो जाती है जब कि दूसरा पक्ष अपनी शक्ति के संयत संगठन द्वारा केवल आत्म रक्षा कर रहा है, और शत्रु को दुर्बल पाते ही प्रत्याक्रमण द्वारा उसके लिये विजय अधिक सुलभ हो जाती है। वर्तमान युद्ध में इङ्गलैण्ड ने इटली के विरुद्ध अफ्रीका में, बहुतांश इसी नीति का सफलता पूर्वक प्रयोग किया है। नेपोलियन पर वेलिङ्गटन की विजय में भी इसी नीति का सत्यानुकरण हुआ सा प्रतीत होता है।

फाक का विचार था शत्रु को 'केन्द्रित' करके उसके मुख्य अङ्ग पर बल पूर्वक आघात किया जाय परंतु जब हम गत से भी अधिक वर्तमान युद्ध में "अकस्मात्" आक्रमणों का प्रभुत्व देखते हैं तो स्वभावतः शंका की जा सकती है कि फाक ने शस्त्रविकास और वर्तमान नीति विस्तार पर विचार नहीं किया था। परंतु इस संबंध में फाक ने कहा था—"यदि शस्त्रविकास के कारण शत्रु की

शक्ति बढ़ सकती है तो हमारा आक्रमण बल भी उसी गति से बढ़ेगा।" समालोचकों को कहने का अवसर मिला है कि "फाक की आक्रमण नीति और उसके नैतिक बल की व्याख्या १६१४-१८ ई० में सफल न हो सकी।" परंतु घटनाओं के सूक्ष्म अन्वेषण से सिद्ध हो जायगा कि यह उनका अनुदार मत है ; भले ही फाक की आक्रमण नीति यथेष्ट सफलता न प्राप्त कर सकी हो परंतु आगे चलकर हम देखेंगे कि ज्यों ज्यों जर्मन युद्ध का संहारी दबाव बढ़ने लगा फाक के नैतिक बल ने अपना वास्तविक प्रभाव प्रकट किया। इस संबंध में एक बात यह न भूलनी चाहिये कि जर्मन प्राबल्य के सम्मुख केवल फ्रेञ्च ही नहीं, समस्त मित्र राष्ट्रों की तैय्यारी और तत्परता नहीं के समान थी; उनके अंतिम विजय में अमेरिकन सहयोग के साथ ही उनके स्वयं अपने नैतिक जमाव ने यथेष्ट भाग लिया है। इस मत की पुष्टि में जर्मन युद्ध की घटना इतिहास के पन्नों से प्रमाण दे रही है। हम जब देखते हैं कि १६४० ई० में हिटलर के सबल आक्रमण ने बात की बात में हालैण्ड, बेल्जियम तथा फ्रांस इत्यादि के घुटने तोड़ दिये तो हमें आत्म ग्लानि के साथ स्वीकार करना पड़ता है कि युद्ध में नैतिक बल का अभाव एक भयंकर क्षति के समान है और वर्तमान भौतिक प्राचुर्य्य के विपरीत भी फाक की अतीत प्रेरणा एक विस्मृत भविष्य वाणी के समान उस इतिहासिक अंधकार में चमक उठती है।

अस्तु, अभी भूत और वर्तमान पर तुलनात्मक दृष्टिपात करने का समय नहीं है, परंतु हम निर्विरोध कह सकते हैं कि फाक की अपनी एक रणनीति थी जिसने मानव इतिहास में एक प्रमुख भाग लिया है। फाक का समस्त जीवन

उसकी रणनीति का विकास और उसका संघर्ष-विषय मात्र है।

युद्ध और इतिहास—मानव समाज का एक विचारणीय अंग है।

(४)

ड्रेफ़स के मामले ने सिद्ध कर दिया कि सैनिक अधिकारियों ने जालसाज़ी और अन्याय किया था जिसमें धार्मिक समुदाय का खुल्लमखुल्ला हाथ पाया गया। अतएव धारा सभा ने दोनों का दमन प्रारम्भ किया; जनता ने भी भर पूर साथ दिया। जेनरल आँद्रे (युद्ध मंत्री) के धर्म विरोधी नियंत्रण से सैन्य-विद्यालय भी वञ्चित न रह सका। फाक एक धार्मिक व्यक्ति था। वह प्रजावाद का विरोधी न था, परंतु प्रजावादी ख्याति अथवा श्रेय उसे प्राप्त न था। फलतः उसकी तरक्की रोक दी गयी, उसका भविष्य अंधकार में पड़ गया। फिर भी दृढ़व्रती फाक ने ऐहिक प्राप्ति के लिये अपना आत्म हनन नहीं किया; वह पूर्ववत् अचल बना रहा। यही फाक के देश प्रेम का अकाट्य प्रमाण मिलता है। कुछ लोगों ने सरकारी दमन से ऊबकर पद त्याग कर देने का निश्चय किया परंतु फाक ने उनका विरोध करते हुये कहा—"तुमलोग भीरू हो; युद्ध के समय इससे भी कठोर नियंत्रण का सामना करना पड़ेगा। यदि अभी तुम्हारी यह दशा है तो उस समय क्या करोगे?"

यही नहीं कि फाक अविचलित रहा, अपितु उसने सरकारी कठोरता को उपेक्षित दृष्टि से भी देखा। उसने अपने एक पत्रकार मित्र को लिखा था—"मैं स्यात ही पेरिस जाता हूँ; मुझे किसी से कुछ माँगना नहीं है, मैं शांति पूर्वक अपने स्थान पर हूं जब तक कि दूसरे पद पर न भेज दिया जाऊँ।"

जून, १९०८ ई०

अन्त में उन्नति का अवसर आ ही गया जेनरल बोनल (प्रधान, सैन्य विद्यालय का पद रिक्त हुआ और क्लेमाँशो ने फाक की दृढ़ता पर मुग्ध होकर, विरोधों के विपरीत भी, फाक को बोनल का उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

❀ ❀ ❀ ❀

सैन्य विद्यालय में फाक की रणनीति का पुनः साक्षात होता है। उस समय ग्राव और मेयर ने सरकारी रण नीति का विरोध करते हुये १४-१८ ई० जर्मन युद्ध की अक्षरशः सत्य भविष्य वाणी की थी, परंतु फाक ने उसपर ध्यान भी न दिया क्योंकि उसका आत्माभिमान दूसरों के मत से प्रभावित हो ही नहीं सकता था। उसके आत्म विश्वास को तोड़ना कठिन दुर्ग पंक्तियों से भी कठिन था। वास्तव में वह कर्मयोगी था, अतएव वह कोरे शब्द और भविष्य वाणियों से अप्रभावित रहा तो आश्चर्य नहीं। अपितु इसमें फाक की धार्मिक दृढ़ता का प्रमाण मिलता है। यहाँ सैनिक की अपेक्षा फाक का कैथोलिक रूप प्रकट होता है। फाक के सारे सैन्य पराक्रम में उसी कार्य-कारण का प्रेरणात्मक धर्म संबंध विद्यमान है।

फाक की नियुक्ति में, कर्नल लेद्दाय हार्त के अनुसार "सारे अङ्गरेजी इतिहास के धारा प्रवाह को ही मोड़ दिया।

बात यह है कि फाक के नियुक्त होते ही अङ्गरेजी सैन्य मण्डल फ्रांसीसी रण नीति के अध्ययन के लिये उत्सुक हो उठा; परिणामतः विलसन (अङ्गरेज़ी स्टाफ कालेज का अध्यक्ष) फ्रांस आया; वह स्वभावतः फाक की दूरदर्शिता और व्यक्तित्व से प्रभावित हो गया जिसके फल स्वरूप में १९१४-१८ के मित्र राष्ट्र संबंध ने एक विशेष रूप धारण करके इतिहास को प्रभावित किया है।

१९११ ई० में अगादिर के मामले से उत्तप्त होकर इङ्गलैण्ड और फ्रांस का क्षीण संबंध सुदृढ़ हो गया:

❁ ❁ ❁ ❁

सितंबर १९१३ ई० २० वीं सेना का सेनापति बनाकर वह नैन्सी भेजा गया। इस नियुक्ति ने सेना में नव शक्ति का सञ्चार किया। सर्व प्रथम, फाक ने युद्ध विभाग की अनुमति बिना भी, भावी जर्मन आक्रमण के विरुद्ध आत्म रक्षा की तैय्यारी प्रारम्भ कर दी। उसके सारे प्रयत्न सेना के संगठन में लग गये। कप्तान दुबार्ले ने फाक का एक सुन्दर चित्र खींचा है:—"फाक को देखते ही मनुष्य उसके हृदय भेदी नेत्रों से प्रभावित हो जाता है। उनमें एक निर्मल तेज और अपार बुद्धि का भण्डार दृष्टि गोचर होता है। वह एक मदार है जो विचार, व्यवस्था, शिक्षा और धर्म—सब का एक साथ ही व्यवहार करता है।... जेनरल फाक को एक ईश प्रेरित 'पैग़म्बर" समझना चाहिये।

उसी ईश प्रेरित 'पैग़बर' ने जर्मनी के विरुद्ध फ्रांस के मोर्चे संभाले हैं।

२८ जूलाई १९२४ ई० आस्ट्रिया ने युद्ध की घोषणा कर दी। ३१ जूलाई को जर्मनी ने राष्ट्रीय 'सैन्यकरण' के साथ रूस और फ्रांस को 'अंतेत्था' (Ultimatum) भेज दी। परंतु 'समर-घोषणा' ३ अगस्त तक स्थगित सी ही रही क्योंकि लंदन स्थित जर्मन राजदूत ने कैसर को विश्वास दिलाया था कि यदि हम फ्रांस पर आक्रमण न करें तो इङ्गलैण्ड रूस (रूस इङ्गलैण्ड और फ्रांस का साथी) पर आक्रमण हो जाने के विपरीत भी फ्रांस को युद्ध से रोक कर स्वयं भी युद्ध से पृथक रहेगा। परंतु मोल्के (जर्मन सेनापति) ने कैसर का विरोध करते हुये कहा—"...नहीं, हमने वर्षों से केवल रूस पर आक्रमण करने के लिये तैय्यारी नहीं की। लाखों मनुष्य कार्यशील हो चुके हैं, अब उसके विरुद्ध कोई भी कार्य्यवाही असंभव है।..."

२ अगस्त को लक्ज़म्बर्ग पर अधिकार करके जर्मनी ने बेल्जियम को भी चुनौती दे दी।

४ अगस्त को इङ्गलैण्ड ने युद्ध की घोषणा की और जर्मनी ने बेल्जियम पर आक्रमण किया। इस आक्रमण के संबंध में यह बात विशेष रूप से ध्यान में रखने की है कि मोल्के के चचा, जर्मनी के भूतपूर्व सेनापति ने निश्चय किया था कि रूस और फ्रांस की 'दु-तर्फ़ी' लड़ाई में सर्व प्रथम वार्सा को शक्ति पूर्वक चूर्ण करके ही पश्चिम में फ्रांस से मोर्चा लेना होगा, और तब तक जर्मनी फ्रांस की ओर आत्म-रक्षक रूप से ही व्यवहार करेगा। परंतु भतीजे ने चचा की अवहेलना की और जर्मनी को अंत में पश्चाताप करना पड़ा। संभवतः

हिटलर ने उस पूर्व उपेक्षित नीति का ही सफलता पूर्वक अनुसरण किया है। अस्तु, खेद यह है कि फ्रांस मोल्ले की उस भयंकर भूल का समुचित लाभ न उठा सका, क्योंकि फ्रांसीसी रणनीति का आधार था "बौद्धिक' न कि भौतिक। १९१४-१८ की भूल के पश्चात् जब हम फ्रांस को पुनः १९३९-४० ई० में हिटलर के भौतिक प्राबल्य से परास्त होते हुये देखते हैं तो हमारी आत्म ग्लानि एक रहस्यमयी विडम्बना बन जाती है। अवसर आने पर इस ग्रन्थिमयी माया का अधिक सुविधा पूर्वक विश्लेषण किया जा सकेगा।

अस्तु, जर्मनी के सबल आघात का प्रथम धक्का फाक को ही संभालना पड़ा जब कि फ्रांस की शेष सेनायें अभी एकत्रित और संगठित हो हो रही थीं। साधारण मुठभेड़ों के पश्चात फाक ने जर्मन सेना पर आक्रमण किया ; फाक की आक्रमण कारी तृप्ति अपूर्ण रही, परंतु उस आक्रमण ने एक महत्व पूर्ण आत्म रक्षा का कार्य अवश्य किया। फलतः जर्मन दबाव कम हो गया।

२७ ता० को फाक उन्नति पर सेना के मुख्य दफ्तर में बुला लिया गया। अपने साथ जेनरल वेगाँ को भी ले गया। इतिहास में फाक और वेगाँ का वही संबंध और माहात्म्य है जो वर्थं और नेपोलियन को प्राप्त था। अधिक स्पष्ट रूप से इसे दूध और पानी का संबंध बताया जा सकता है। वेगाँ के अतिरिक्त जेनरल आँद्रे तार्दू (फ्रांस के भूतपूर्व युद्ध मंत्री भावी प्रधान मंत्री) भी साथ गये। परंतु वहाँ पहुँचने के पूर्व ही जर्मन बढ़ाव की तीव्र गति ने फ्रांसीसी आयोजना को व्यर्थ कर दिया।

❀ ❀ ❀ ❀

जाफ़रे (प्रमुख सेनापति) ने फाक को नव निर्मित सेना का गुरुतर भार सौंपा।

❀ ❀ ❀ ❀

सितम्बर में जर्मनी को मार्ने की करारी हार खानी पड़ी जिसने फाक को प्रजा के नेत्रों में एक उच्च स्थान प्रदान किया। परंतु खेद से स्वीकार करना पड़ता है कि फ्राँसीसी सेना नायक अपनी विजय का समुचित लाभ न उठा सके। फाक ने उनके संबंध में लिखा है—"वह श्रेष्ठ नायक और वीर सैनिक थे, परंतु युद्ध के समय—युद्ध के अतिरिक्त ?।"

इस एक वाक्य से ही बहुत कुछ अनुमान किया जा सकता है।

❀ ❀ ❀ ❀

धर्म भावनाओं ने फाक के सैन्य पराक्रम में कितना महत्व पूर्ण भाग लिया है, इसका प्रमाण केवल इसी एक बात से चलता है कि पुत्र और जामाता की मृत्यु सूचना* मिलने पर भी वह अविचलित रूप से, बिना किसी विशेष भाव प्रदर्शन के, संघर्ष शील बना रहा,—उसका विश्वास था कि कर्तव्य के लिये बड़े से बड़ा बलिदान भी प्रत्येक मनुष्य का धर्म है।

मार्ने की विजय के पश्चात १४-१०-१४ को फाक की सेनाओं ने जब पुनः बढ़ने का प्रयत्न किया तो सुदृढ़ और 'खाई-बद्ध' जर्मन आत्म रक्षा के सम्मुख वह सर्वथा विफल

---

* २२ अगस्त को बेल्जियम के युद्ध में दोनों एक साथ ही आहत हुये थे।

हुई। कहा जा सकता है कि जर्मनी की विरोध 'पांति' साधारण हेर-फेर के अतिरिक्त, अंतिम चार वर्षों तक वैसी ही बनी रही। परंतु जब फाक २१-१०-१४ को लिखता है—"दशा ठीक है, शत्रु सर्वत्र पीछे हट रहा है, परंतु लोग मेरी इच्छानुकूल कार्य नहीं कर रहे हैं"—तो हमें उसके अपार आशावाद और आत्म विश्वास का प्रमाण मिलता है जर्मनी ने अब 'खाई-बद्ध' आत्म रक्षा का आश्रय लिया था फिर भी फाक ने 'व्यवस्थित आक्रमण' की नीति नहीं त्यागी। संभवतः उसने अनुभव ही नहीं किया था कि 'खाई-बद्ध' युद्ध में आत्म-रक्षा के विरुद्ध आक्रमण का अधिकांश महत्व क्षीण हो जाता है। ठीक इसी समय मुख्य दफ्तर से सूचना मिली '.७५* म. म. विस्फोटक गोले दो तीन सप्ताह तक न मिल सकेंगे।" विवशतः उस आक्रमण क्रम रोकना पड़ा और उसके सैनिकों को कुछ अवकाश मिला।

❀ ❀ ❀ ❀

४ आक्टोबर को फाक जाफ़रे का सहायक होकर चला गया ; वहाँ उसे कास्तेलनाव इत्यादि की सेनाओं का सञ्चालन तथा ब्रिटिश और बेल्जियन सेनाओं का संयोजन करना था।

इस संबंध में एक विचित्र स्थिति का वर्णन करना आवश्यक है जिसे मेयर ने यों लिखा है :—"८ आक्टोबर को जर्मनी ने मान्शियाा-बोई ग्राम जीत लिया ; फाक ने जेनरल ब्रजर को आज्ञा दी कि वह दूसरे दिन ७ बजे प्रातः

---

* खाइयों के विरुद्ध मार करने वाले गोले।

जर्मनी से उस ग्राम को आक्रमण करके पुनः छीन ले। आज्ञा का पालन नहीं हुआ। बार-बार वही आज्ञा दुहराई गई और बार-बार उसकी अवहेलना हुई। उनका प्रश्न था—'असंभव आज्ञा पर ध्यान भी क्यों देना ?" फाक ने इसका यों वर्णन किया है—"सारे तर्क का मेरे पास केवल एक ही उत्तर है। 'आक्रमण'। लोग मेरी आज्ञा पर चकित हों, परंतु मेरा उद्देश्य तो पूरा हो ही जाता है: विश्राम और भग्गू के स्थान में आक्रमण वृत्ति का सञ्चार।"

१६ ता० को समाचार मिला कि बेल्जियम वायसर का मोर्चा छोड़ देना चाहता था। फाक ने तुरंत डंकर्क में बेल्जियम के प्रधान मंत्री, फिर महाराज अलबर्ट से मिलकर अविचल युद्ध की प्रार्थना की। यद्यपि बेल्जियन सैन्य मण्डल के कुछ लोग जर्मनी के प्रबल बढ़ाव और देश के हताहत से निराश होकर मित्र राष्ट्रों का भरोसा छोड़ चुके थे, तथापि फाक के सचेष्ट प्रयत्न ने महाराज की निश्चल युद्ध भावना को जीवन दान अवश्य दिया। फाक ने महाराज अलबर्ट से भाव पूर्वक कहा—"प्रजातंत्र के एक सैनिक के नाते मैं महाराज को विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि हमारा पक्ष न्याय पर अवलम्बित है, ईश्वर हमें अवश्य विजयी करेगा।"

❀ ❀ ❀ ❀

मित्र राष्ट्र वायपर्स में जर्मनी से संक्रात्मक मोर्चा ले रहे थे। जेनरल एडमान्ड्स ने उस समय का एक ऐतिहासिक चित्रण किया है—"ब्रिटिश साम्राज्य और विनाश के मध्य धूलि धूसरित परिश्रांत और परितप्त लोगों की एक क्षीण-सी मानव भीत भर शेष रह गई थी..."

परंतु उन कठिन आत्म रक्षक घड़ियों में भी फाक के नैतिक

प्रभाव ने सेना को बिल्कुल निराश हो जाने से अवश्य रोका था। उसके आत्म विश्वास ने अखण्ड रूप से लोगों को युद्ध प्रेरणा दी। परिणामतः जर्मनी वायपर्स पर विजय प्राप्त करने में असफल रहा और यह अनुचित न होगा कि फ्रांस की वास्तविक सैन्य पराकाष्ठा उसके अखण्ड आत्म बल में ही केन्द्रित है।

---

(६)

वायपर्स के पश्चात् युद्ध जम गया ; उसी प्रकार टैननवर्ग-में रूस के पराजय के कारण पूर्व में भी संग्राम ने एक अनिश्चयात्मक जमाव का रूप धारण किया। सामुद्रिक युद्ध भी शिथिल सा ही था, जब तक कि जर्मनी ने ब्रिटिश जल सेना का सामना करने में अपने को अयोग्य पाकर "जल-गर्भित" आक्रमण द्वारा अङ्गरेज़ों की सामुद्रिक शक्ति को क्षीण न कर दिया।

१९१४ ई० के अन्त होते न होते जर्मनी ने अनुभव कर लिया था कि मित्र राष्ट्रों को परास्त करने के लिये लम्बी लड़ाई करनी होगी और इसी अनुभव के आधारपर उसने लम्बे युद्ध की तैयारी भी आरम्भ कर दी।* फलतः १९१५ ई० तक उसने शस्त्रादि की भर पूर भर्ती कर ली, परन्तु मित्र

---

* १९३९ ई० के जर्मन युद्ध में मित्र राष्ट्रों ने स्वयं युद्ध को लम्बा करने का प्रयत्न करते हुये कार्य किया है, क्योंकि उनका विश्वास है जर्मनी लम्बे युद्ध में सफलता पूर्वक टिक नहीं सकता।

राष्ट्र अभी इस परिणाम पर पहुँच ही रहे थे। ❀ मित्र राष्ट्रों ने लम्बे युद्ध की सम्भावना देख कर सर्व प्रथम मानव बल का संग्रह किया,—१९१४ ई० के अन्त तक उन्होंने १० लाख सैनिक तैय्यार किये। परन्तु दूसरी ओर दशा शोचनीय थी—वर्दियाँ समाप्त हो चली थीं, जूतों की कमी और खराबी से पाँव में पाला मारने लगा, खाइयाँ तैय्यार करने के लिये सामान का नितान्त अभाव था। जर्मनी की भाँति "हस्त-बम" और "खाई-उड़ाव- सुरंगें" भी न थीं; तोपखानों के पास कंटीले-तारों की बाढ़ें काटने के सामान भी न थे। इस दयनीय अभाव के प्रतिकूल जाफरे ने आक्रमण नीति का त्याग नहीं किया, और बार बार अङ्गरेज़ों को आक्रमण में भाग लेने पर ज़ोर दिया। उस समय यदि फाक ने अङ्गरेज़ी दुर्दशा और फ्रांसीसी आवश्यकता के मध्य एक प्रकार से चतुर संयोजक का कार्य न किया होता तो संभवतः दोनों राष्ट्र के मध्य भयङ्कर विच्छेद का कुअवसर प्राप्त होने में सन्देह न रह जाता। यह कहने में दोष नहीं कि फाक जैसे सहिष्णु नेता बिना ऐंग्लो—फ्रेञ्च मनोमालिन्य उनकी निरंतर पराजय को प्राण घातक बना कर ही रहता। जाफरे की भक्ति और अङ्गरेज़ों के प्रति सहानुभूति के साथ ही इसमें फाक के उद्देश्य निष्ठा (शत्रु पर विजय, जो सम्मिलित पराक्रम द्वारा ही संभव थी) का भी अकाट्य प्रमाण मिलता है। यह न भूलना चाहिये कि पारस्परिक मत भेद और सैन्य असफलताओं के विपरीत भी न तो फाक का साहस भंग हुआ, न उसका आत्मविश्वास शिथिल पड़ा। पेताँ को किसी

❀ इस बार भी हिटलर को विवश हो कर लम्बे युद्ध के लिये तैय्यार होना पड़ रहा है।

आश्चर्य्य-जनक सफलता की आशा न थी परन्तु फाक स्वभावतः ऐसे निराशावाद के विरुद्ध था। वह नकशे में फ्रूस और वाटरलू पर उँगली धरते हुये गर्व पूर्वक कहा करता— "हमें यहीं विजय प्राप्त करनी है ·······"

* * * *

जर्मनी के नये शस्त्र (गैस) ने मित्र राष्ट्रों की सारी आयोजना पर (अप्रैल, '१५ ई० में) पानी फेर दिया। यद्यपि खाइयों को व्यर्थ सिद्ध करने के लिये यह अचूक शस्त्र था, परन्तु जर्मनी ने उसका समुचित प्रयोग न किया क्योंकि प्रथम तो जर्मन नायकों को ही उसकी सफलता में विश्वास न था और, नैतिक अनुत्तर दायित्व के अतिरिक्त, गैस का प्रयोग उन दिनों स्वयं आक्रमणकारी के लिये ही हानिकारक सिद्ध हो सकता था,—अभी तक गैस पर वर्तमान कालीन प्रभुत्व न प्राप्त हुआ था।

* * * *

अरास के हाहाकारी परिणामों ने सैनिक और सेना नायक—सब को खिन्न कर दिया; मानव प्राणों के उस प्रतिहारी क्षय को देख कर प्रजा और राजनीतिज्ञों ने शोर मचाया,—एक भयङ्कर विद्रोह ने सैन्य व्यवस्था को अस्त-व्यस्तकर दिया। पैताँ ने परिस्थिति को संभालने में महत्वपूर्ण भाग लिया; भविष्य में प्रत्येक निश्चय को एक सभा द्वारा प्राप्त करने का उपाय किया परन्तु फाक इसके विरुद्ध था क्योंकि उसके अनुसार "युद्ध परामर्श या सभा-समिति द्वारा नहीं किया जाता।"

* * * *

धीरे धीरे फाक को विवश हो कर नैतिक पर भौतिक प्राबल्य

स्वीकार करना पड़ा। वह लिखता है—"बिना प्रारम्भिक तैय्यारी के पैदल आक्रमण सदा निष्फल जाता है। सफलता की गाड़ी ठीक वहीं जा कर थम जाती है जहाँ यथेष्ट तैय्यारी नहीं हुई रहती। हमने अनुभव कर लिया है कि संगठन शक्ति सैनिक वीरता से भी अधिक प्रभाव शाली है।"

* * * *

निरन्तर असफलता और लाखों जानों का व्यर्थ जूआ खेलते रहने के कारण जाफ़रे के विरुद्ध विद्रोह बढ़ता जा रहा था और साथ ही साथ उसके अपयश के काले बादलों ने फाक को भी ढ़कना प्रारम्भ कर दिया। महत्वाकांक्षी निवेल ने इस परिस्थिति का लाभ उठा कर ऊपर उठने का प्रयत्न किया। यदि उस संज्ञाहीन काल में सरकारी भरोसा भी फाक से उठने लगा तो आश्चर्य नहीं। जाफ़रे ने चतुरता पूर्वक दाँव लिया,—फाक को सरकारी क्रोध पर बलि कर के स्वयं बचाव का साधन ढूंढा। फाक ने इस परिस्थिति का वर्णन करते हुये लिखा है—"कुत्ते को मारने के लिये लोग उसे पागल कहना प्रारम्भ कर देते हैं।"-*

* * * *

फाक को रण नेतृत्व से पृथक होने की आज्ञा मिली तो उसने क्रेमाँशो का परामर्श प्राप्त किया; क्रेमाँशो ने कहा—"अभी चुपचाप आज्ञा पालन कर लो' फिर देखी जायगी।"

इस सम्बन्ध में स्पष्टरूप से कह दिया—"मैं जर्मनों का

---

* कुछ दिनों पूर्व फाक मोटर दुर्घटना में आहत हुआ था; अतएव, जाफ़रे तथा फाक के अन्य विरोधियों ने उसे अस्वस्थ बना कर रण-नेतृत्व की अयोग्यता का प्रचार प्रारम्भ कर दिया।

प्राणांत करना चाहता हूँ; यदि सरकार चाहे तो मुझे हटा सकती है, परन्तु व्यर्थ अस्वास्थ का आड़ लेना अन्याय होगा।" उसने यहाँ तक कहा—'मुझे सेनापति से साधारण नायक भी बना दिया जाय तो चिन्ता नहीं, परन्तु आगे बढ़ कर लड़ने का अवसर मुझसे न छीना जाय। फ्रांसीसी सैनिक का नेतृत्व किसी भी पद में आत्म सम्मान से खाली नहीं।

यह उसी फाक के शब्द है जिसने एक मित्र को रणभूमि में मृत्यु लोक सिधारने पर कहा था—"धन्य है वह श्रेष्ठ गति ! भला कौन ऐसी पवित्र मृत्यु की लालसा न करेगा?"

* * * *

जाफ्रे फ्रांस का मार्शल बना कर सम्मान पूर्वक रण नेतृत्व से पृथक कर दिया गया था। निवेल उसके स्थान में प्रमुख सेना पति नियुक्त हुआ परन्तु उसने भी १½—२ लाख मनुष्यों को मुफ्त कटा कर अपनी भयङ्कर अयोग्यता का दिग्दर्शन कराया। पारिणामतः पेताँ प्रमुख हुआ। वास्तव में देखा जाय तो निवेल का पतन फाक के उत्थान का कारण बना।

पेताँ की नीति, विलसन * के अनुसार, "बेकार बैठक बाज़ी" की थी; १९३९-४० ई० के वर्तमान युद्ध में भी पेताँ की वही स्वाभाविक विशेषता सिद्ध करने का प्रयत्न हुआ है।

* * * *

रण नेतृत्व से पृथक होकर फाक को सैन्य संगठन के लिये इटली जाना पड़ा। वहाँ से वह लौटा तो रैपालो संधि पर फ्रेञ्च सरकार टूटकर पद त्यागकर चुकी थी; सरकार

---

* अङ्गरेज़ी सैन्य प्रतिनिधि।

के उग्र समालोचक, क्लेमाँशो, ने सरकार की बागडोर हाथ में ली। क्लेमाँशो को पूर्व स्थापित "प्रमुख युद्ध समिति से घृणा थी क्योंकि सभा समितियों के बाहुल्य का उसे कटु अनुभव था ; यों भी उसे इस समिति के कारण फ्रांसीसी सैन्य सञ्चालन में भयंकर बाधा की आशंका थी। अस्तु, अनेक उलट फेर के उपरांत, स्वयं पेताँ के परामर्श और सहयोग द्वारा, फाक मित्र राष्ट्र सेना का अधिष्ठता नियुक्त हुआ। इस नियुक्ति में पेताँ के सहयोग का क्लेमाँशो के चुनाव से भी अधिक फाक की व्यापक लोक-प्रियता सिद्ध होती है। फाक यद्यपि केवल क्लेमाँशो की प्रतिछाया रूप खड़ा हुआ, तथापि इस उच्च पद के योग्य सिद्ध होने में फाक की सैन्य महानता बढ़ती ही है, घटती नहीं।

* * * *

समस्या इतने से भी हल न हुई। फ्रांसीसी अङ्गरेज़ों को नौकर समझकर आज्ञा भञ्जन के लिये कोसते रहे, और अङ्गरेज़ अपनी त्रुटि तथा दुर्बलता का दोष फ्रांसीसियों के सिर मढ़ने में व्यस्त थे।

विवश होकर फाक ने क्लेमाँशो से प्रार्थना की कि "एक ऐसा विधान होना चाहिये जिसके द्वारा आज्ञा कार्यान्वित कराई जा सकें, अन्यथा अपर्याप्त साधनों के साथ अपर्याप्त सञ्चालन सारी दशा को अति शोचनीय बना देगा।

मित्र राष्ट्र की एक सम्मिलित बैठक हुई कि आख़िर—पेताँ, फाक, क्लेमाँशो, हेग, राबर्टसन, विलसन कौन इस उत्तर दायित्व के संपूर्ण सुयोग्य था। सभा ने सब के युद्ध संबंधी विचार सुने। पेताँ के निराशावादि विचारों ने सब की आशा और उत्साह पर पानी फेर दिया ; मिलनर ने इस

संबंध में लिखा है—"वह सावधानी पूर्वक बचाव की खोज में था।" ३९-४० ई० के वर्तमान युद्ध में पेताँ के कारनामों को देखकर हमें मिलनर के उस अनुमान पर शंका करने की तनिक भी इच्छा नहीं होती। फाक ने उस समय कहा था। मैं युद्ध करना चाहता हूं, निरंतर युद्ध करूँगा। अमीन्स में, अमीन्स के आगे, पीछे, सर्वत्र लड़ता ही रहूँगा। मैं जर्मनों को मार मार कर ढीला कर दूँगा ; वह न तो हमसे बलिष्ट ही है, और न चतुर। हम जहाँ हैं, हमें वहीं जम जाना चाहिये। मरे बिना एक इञ्च भी पीछे हटना देश द्रोह होगा।

क्लेमाँशो का मुख मण्डल प्रदीप्त हो उठा ; उसने भाव पूर्वक कहा—"यह है वीर पुरुष।"

फलतः जेनरल फाक "पश्चिम में' मित्र राष्ट्र सेनाओं का संयोजक नियुक्त हुआ। फिर भी प्रयोजन सिद्ध न हुआ। संयोजक और सञ्चालक में बड़ा अंतर है। सारांश यह कि क्लेमाँशो ने फिर सभा बुलाई और जेनरल फाक "मुख्य सेनापति" बनाम संयोजक नियुक्त हुआ। रेकौली ने लिखा है—"यदि फाक को पहिले ही मित्र राष्ट्र का सेनापति बना दिया गया होता तो युद्ध और भी पहिले समाप्त हुआ होता।"

इस प्रकार वर्तमान इतिहास का सैन्य शिखर बनकर जगत पर प्रकट हुआ।

फाक की नियुक्ति ने राजनैतिक और सार्वजनिक जगत को आच्छादित कर लिया—४ अप्रैल को जर्मनी के निष्फल आक्रमण को लोगों ने फल स्वरूप प्रस्तुत करते हुये उसकी पुष्टि की। उस सफलता में फाक की नैतिक प्रेरणा साकार सिद्ध हो रही थी। सेना नायकों ने नव साहस के साथ भाग लिया था। पीछे हटने के बजाय लोग प्राणों की बाज़ी लगाकर अड़ गये।

फाक की आज्ञाओं में प्राणप्रेरक प्रोत्साहन का अंश अधिक था, क्योंकि आत्म प्रेरित समुदाय ने सैन्य आज्ञाओं के संकुचित दायरे से मुक्त होकर विजय संघर्ष में हृदय पूर्वक भाग लिया।

फाक के सैन्य सञ्चालन का मुख्य आधार उसके अकाट्य आत्म विश्वास पर अवलम्बित है। अमीन्स-पेरिस रेलवे की उन उत्कट घड़ियों में उसने कहा था—"यथार्थ में विजय असंभव प्रतीत होती है, परंतु नैतिक दृष्टि से मैं विजयी हो कर ही रहूँगा—"

२५ अप्रेल १८ को जर्मनी के पुनराक्रमण के कारण फ्रांस को नयी पराजय का कटु अनुभव करना पड़ा। इस अप्रिय समाचार को सुनते ही फाक ने हेग (अङ्गरेज़ी सेनापति) को लिखा—"मैंने सुना है आप पीछे हटना चाहते हैं, परंतु आपको ऐसा विचार भी न करना चाहिये। यदि आप शत्रु का सामना करने में अयोग्य हों तो मैं स्वयं आ सकता हूँ..."

इससे स्पष्ट हो जाता है कि फाक का आत्म विश्वास कितना दृढ़ था।

दूसरे दिन फाक को सूचना मिली की प्लूमर पीछे हट गया था। इस प्रकार यदि प्लूमर को सेना अधिक सबल और सुरक्षित स्थिति में पहुँच गई थी परंतु निर्विरोध एक अङ्गुल भी पीछे हटना फाक को स्वीकार न था। पीछे हटने की अपेक्षा मर जाने को स्यात् वह श्रेयस्कर समझता था, उनके नैतिक बल का समर्थन संभवतः इसी विचार से प्रतिपादित होता है।

* * * *

फ्लांदर्स में जर्मनी ने सबल आक्रमण किया। अङ्गरेज़ों ने तुरंत समुचित सहायता न पहुँचाने के लिये फाक को दोषी ठहराया, परंतु इस देर दार का मुख्य कारण पेताँ को ही समझना चाहिये* जो अब फाक के प्रमुख हो जाने के कारण अपनी ढील ढाल की रक्षा फाक की आड़ में करने लगा था। पेताँ को सम्मिलित आक्रमण को अपेक्षा फ्रांसीसी सेना का बचाव अधिक प्रिय था।

शत्रु की चालों पर "क़यास-आराई" में समय नष्ट करना फाक की युद्ध वृत्ति के विरुद्ध था। वह स्वयं आक्रमण करके नैतिक दबाव से शत्रु को दाव दिखाने पर विवश कर देना चाहता था ताकि उनपर सशक्त प्रभुत्व स्थापित किया जा सके।

फाक की आज्ञायें बहुधा असीमित और 'गोल-मोल' होती

* पेताँ के उसी मनोवृत्ति का उदाहरण वर्तमान युद्ध की आत्म रक्षक नीति से मिला है।

थीं। "पेरिस की ओर शत्रु के बढ़ाव को प्रत्येक रूप से रोकना होगा ; एक एक अंगुल की प्राण पण से रक्षा करनी होगी।" भले ही उन आज्ञाओं में कोई सैन्य चातुर्य्य दृष्टि गोचर न हो, परंतु, वास्तव में, उनकी व्यापकता ही विशेषता थी जिसने सेना नायकों को स्वतंत्र चेष्टा की संपूर्ण सुविधा प्रदान की। हाँ, यह अवश्य स्वीकार करना होगा कि उन्हें कार्यान्वित करने के लिये फाक जैसे विद्युत-व्यक्तित्व की आवश्यकता थी। मोर्चों पर या पड़ाव में—फाक की प्रेरणा शक्ति ने लोगों को सर्वत्र प्रोत्साहित और कर्मशील बना दिया।

फाक अपने साथियों का साथ कितनी सच्चाई के साथ दे सकता था 'इसका उदाहरण एक विशेष परिस्थिति द्वारा मिलता है; जर्मनी की अकस्मात आक्रमण संभावना को देख कर फाक ने अङ्गरेज़ी और अमेरिकन सेनाओं को सहायतार्थ दक्षिण भेज दिया। हेग ने इसमें अङ्गरेज़ों पर विपत्ति का अनुमान करके अङ्गरेज़ी सरकार से फ़रियाद की। दशा इतनी आतुर और शोचनीय थी कि फ्रांसीसी प्रजा और फ्रेञ्च सरकार— दोनों व्याकुल हो उठे। ऐसा प्रतीत होने लगा मानो फाक और पेताँ के साथ क्लेमाँशो की सरकार भी उखड़ जायगी, परन्तु क्लेमांशो ऐसे ही सङ्कट काल में अपना रूप प्रकट करता था; उसने दृढ़ता पूर्वक फाक या पेताँ को बर्ख़ास्त कर देने से केवल इन्कार ही नहीं किया, अपितु उनमें पूर्ण विश्वास रखने की भी प्रार्थना की। परन्तु भूखे भेड़ियों के क्षुधा तर्पण द्वारा उनका विरोध तोड़ देने के निमित्त उसने कुछ अनावश्यक नायकों को बलि चढ़ा देने का निश्चय किया। उनमें कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्हें फाक के "पुराने

साथी" कहलाने का श्रेय प्राप्त था। फाक ने सारे विरोधों के विपरीत भी क्रेमाँशो से दृढ़ता पूर्वक प्रार्थना की कि उन्हें एक बार क्षमा कर दिया जाय,—ऐसा ही हुआ।

प्रत्येक आपदा में फाक की धर्म भावना ने उसे विचलित होने से रोका था। उसकी आडम्बर हीन, सरल-सूक्ष्म रहन सहन इसका साक्षात उदाहरण है। खान-पान, कार्य व्यवहार, मित्र और समाज—प्रत्येक बात में वह अपने को नियंत्रण में रखता था; सिगार का शौक़ उसे अवश्य था; उसने स्वीकार किया है—"यह मेरा एक दोष है।" वह इस दोष का इतना वशीभूत था कि सिगार पीने के लिये भोजन भी जल्दी जल्दी कर लेता। कहने वालों का मत है कि "प्रथम सिगार में वह मौन, दूसरे में चैतन्य और तीसरे में सशक्त हो जाता।"

बहुधा वह प्रातः काल उठ कर पैदल ही गिर्जा घर से लौट कर फिर कोई अन्य कार्य करता। एक बार मार्दक क्रेमाँशो का एक परम आवश्यक समाचार ले कर उसके पास आया तो फाक गिर्जा घर में था। प्रतीक्षा के उपरान्त फाक ने बाहर आते ही कहा—आप जानते हो हैं जब कभी मुझे थोड़ा बहुत अवकाश मिल जाता है तो मैं उसका इस पवित्र स्थान में सदुपयोग करता हूं; जब मैं भगवान के इस मन्दिर से बाहर आता हूं तो मुझे अधिक बल का आभास होता है, मेरी दुविधायें मिट सी जाती हैं।...मैंने युद्ध के अनेक गुरुतर निर्णय यहीं किये हैं—"

जर्मन आक्रमण भयंकर रूप धारण कर रहा था; क्रेमाँशो घबड़ाया हुआ स्वयं फाक के पास आया तो उसे ज्ञात हुआ कि गिर्जाघर में रविवार की पूजा में था। क्रेमाँशो ने कहा—

"नहीं, उनकी शांति भंग न करो, इस प्रकार उन्हें बड़ा बल मिलता है।—कोई बात नहीं, मैं प्रतीक्षा कर रहा हूं।"

* * * *

१८ जूलाई को प्रातः ४ बजे फाक ने मार्ने के दक्षिण जर्मनी पर साधन युक्त भीषण आक्रमण किया; जर्मनी को ३०—४० हज़ार प्राण गँवाकर पीछे हटना पड़ा। दुख दायी पराजयों के पश्चात इस सफलता ने मित्र राष्ट्रों में नव जीवन का सञ्चार किया और जर्मनी को पराजय का कटु अनुभव करना पड़ा। इस विजय ने फाक को विशेष आत्म सन्तोष प्रदान किया क्योंकि इसमें भौतिक की अपेक्षा नैतिक सफलता का आधिक्य था।

फाक ने युद्ध में चतुर चालों को कभी महत्व नहीं दिया वह युद्ध को सदा साकार चेष्टा के रूप में ही देखा करता था। उपरोक्त विजय ने फाक के नेत्रों में इससे अधिक मूल्य नहीं प्रस्तुत किया। उसने एक पत्र में भविष्यवाणी करते हुये क्लेमाँशो को लिखा था—"१६१६ ई० इस युद्ध का निर्णायक वर्ष होगा क्योंकि उस समय अमेरिका अपने प्रयास में सफल होगा·····"

कहने का अभिप्राय यह है कि अमेरिकन सहायता बिना फाक भी विजय को असंभव समझने लगा था, फिर भी जहाँ तक नैतिक प्रभुत्व का प्रश्न था, मार्ने की विजय उसके लिये आशा और आत्म संतोष का कारण बनी।

निरंतर असफलताओं के प्रतिकूल फाक निश्चल विजय पराक्रम देखकर, कर्नल लिडेल हार्ट के शब्दों में, स्वीकार करना पड़ता है कि वह "चिकनी शहतीर पर चढ़ने वाला अजेय योद्धा था।"

❀ ❀ ❀ ❀

धीरे धीरे मित्र राष्ट्र ने अमेरिकन सहायता से परिपूर्ण होकर मध्य यूरोप में भी सबल आक्रमण प्रारम्भ कर दिया था। अनेक सामारिक हेर फेर के पश्चात् १५ सितम्बर १९१८ ई० को उन्हों ने सेलोनीका में बलगारियन सेना पर आघात किया; बलगारियन सेना पहिले ही युद्ध से परिश्रांत और परितप्त हो चुकी थी; सोकोलदोब्रोपोले में पहाड़ी अभेद्यता पर भरोसा करके उसने अपना जमाव कम कर दिया था—मित्र राष्ट्र ने ठीक यहीं आघात किया और बलगारियन पाँव उखड़ गये—उसने विवशतः पराजय प्रेरित 'युद्धावकाश' की प्रार्थना की।

उसी दिन प्रातः रालिन्सन ने हिन्डेन वर्ग पाँति पर धावा बोल दिया। परिणामतः लूडन्डर्फ (जर्मन सेनापति) निराश हो गया। वह पागलों के समान सैन्य मण्डल के डाह, क़ैसर की मानवता (?) तथा सरकार की पराजय वृत्ति को कोसता हुआ मूर्छित हो गया। फाक की लूडन्डर्फ से तुलना करने पर हम देखेंगे कि "भले ही फाक की समस्त सेनायें उसके हाथ में बर्फ के समान पिघल जाती, वह लूडन्डर्फ़ के समान कदापि विचलित न होता।... वह अंतिम श्वास तक अकेला लड़ता रहने वाला वीर था।"

अस्तु ३ आक्टोबर को जर्मनी ने प्रेसिडेन्ट विलसन के पास 'युद्धावकाश' की प्रार्थना की। संसार तथा जर्मन प्रजा पर सहसा प्रकट हो गया कि जर्मनी हार चुका था—इस दशा ने फाक को एक निर्णायक पग के लिये नव शक्ति प्रदान की। वह कम से कम एक फ्रांसीसी अवश्य था। जो अब

भी अपरिश्रांत संघर्ष के लिये सचेष्ट तत्पर कहा जा सकता था।

क्लेमाँशो चाहता था शीघ्र अति शीघ्र जर्मनी को पूर्ण रूपेण चूर्ण करने के लिये अमेरिकन सेना के अधिकाधिक नियंत्रण द्वारा युद्ध के अंतिम आघात किये जायें। क्लेमाँशो ने शिकायत करते हुये कहा था—"फाक को यह नहीं ज्ञात कि वह अपनी आज्ञा का क्योंकर पालन करा सकता है"; वास्तव में क्लेमाँशो को एक महति चिंता ने व्याप्त कर लिया था कि "शीत काल के पूर्व एक निर्णायक और विराट विजय के सुअवसरों को अमेरिकन सेना नष्ट कर रही थी।" उसने आवेश में आकर फाक से यहाँ तक कह डाला—"आप फ्रांस के सम्मुख इसके उत्तर दायी होंगे।"

बार-बार अनावश्यक अंकुश खाकर फाक से अब अधिक सहन न हुआ; उसने उत्तर दिया—"देखिये, वैधानिक रूप से मैं आपका आज्ञापात्र नहीं हूँ।" क्लेमाँशो ने इस उत्तर को अति गम्भीर शंका दृष्टि से देखा; उसने इसे भयंकर धृष्टता समझा और कहने लगा—फाक का दिमाग चढ़ गया है "मुझे भय है कहीं वह दूसरा बोलाञ्जर न बन बैठे।" परंतु मो० प्वायङ्क्येर ने क्लेमाँशो को समझाते हुये कहा—नहीं, यह देखना आपका कार्य नहीं कि फाक अमेरिकन सेनापति के रूप में ❀ क्या कर रहा है; इस प्रकार वह अमेरिकन न कि फ्रेञ्च सरकार के सम्मुख उत्तरदायी ठहराया जायगा—क्या आप ऐसा ही चाहते हैं?

❀ फाक मित्र राष्ट्र के प्रमुख सेनापति के नाते अमेरिका का भी सेनापति था।

थोड़ा धैर्य्य धारण कीजिये, यदि इन छिछलें प्रदेशियों ने दशा को फिर भी न सुधरने दिया तो समुचित कार्य्यवाही की जायगी"। परिणामतः क्रेमाँशो ने फाक को लिखे हुये पत्र की भाषा में संशोधन और परिवर्द्धन कर दिया। क्रेमाँशो का पत्र पाकर फाक को दुख अवश्य हुआ परंतु उसने बातको वहीं समाप्त भी कर दिया; इस संबंध में उसने व्यावहारिक मत देते हुये कहा था—"उस आज्ञा का प्रयोजन ही क्या जो पालन न की जा सकें। हमें भिन्न भिन्न लोगों के साथ विभिन्न रूप से व्यवहार करना पड़ता है, विशेषतः प्रदेशियों के साथ; यही कारण है कि मैं ने आज्ञा की अपेक्षा धैर्य्य और परामर्श द्वारा कार्य करना अधिक उचित समझा है।"

यह घटना सहज ही में सिद्ध कर देती है कि फाक कितना धीर, वीर, तथा मानव स्वभाव का उदार पारखी था। उसमें क्रेमाँशो का ताना शाही तेज न रहा हो, परन्तु मानव स्वभाव पर प्रभुत्व स्थापित करने की क्षमता अवश्य थी।

\+ + + +

२३ आक्टोबर को प्रधान विलसन (अमेरिका) ने जर्मनी के युद्धावकाश प्रार्थना का उत्तर देते हुये उसे संपूर्णतः आत्म-समर्पण कर देने का आदेश किया। परंतु लूडन्डर्फ़ अब भी इस आशा में युद्ध करता जा रहा था कि सीमांत सुरक्षा द्वारा वह मित्र राष्ट्र के निश्चय को सरल बनाने में सफल होगा,—उसकी सोची एक भी न हुई। ३० ता० को तुर्की परास्त हुआ और आस्ट्रिया ने भी युद्धावकाश की प्रार्थना कर दी। लुडन्डर्फ २६ ता० को ही व्यापक विरोध होनेके कारण पद त्याग करने पर बाध्य कर दिया गया था। ४ वर्षों तक युद्ध की संहारी यातनाओं से ऊब कर जर्मन प्रजा के साथ ही ४

नवम्बर को जल और थल सेना ने भी विद्रोह कर दिया,— दशा अब संभालने की न रही। ६ नवम्बर को जर्मन प्रतिनिधि—मण्डल ने युद्धावकाश की प्रार्थना करने के निमित्त बर्लिन से प्रस्थान किया।

इस समाचार को पाकर फाक ने और भी बल पूर्वक पग बढ़ाया। इस से सिद्ध होता है कि फाक स्वभावतः किसी कार्य का सफलांत किये बिना बैठने वाला प्राणी न था; अनिश्चित आशाओं पर जीवित रहने वाला जीव वह नहीं था।

जर्मन प्रतिनिधि मण्डल ने देखा देश चहुँ ओर से दिनों दिन दबता ही जा रहा है, वाह्य परिस्थितियां प्रतिकूल थीं, भूख और विभीषिका ने देश को क्रांति की भेंट किया था— विवश होकर उन्हें आत्म समर्पण करना पड़ा।

११ बजे दिन, ११ नवम्बर सन १९१८ ई० को फाक ने उस महा नर मेध को समाप्त कर दिया।

—:॰:—

(८)

जर्मनी ने युद्धावकाश की प्रार्थना की है—ऐसा समाचार पाते ही फाक संधि शर्तों के निर्माण में संलग्न हो गया था। उनपर एक सूक्ष्म दृष्टिपात करने से फाक के दूरदर्शिता का भावी महत्व स्थिर होता है।

उसकी प्रथम शर्त के अनुसार जर्मनी को १५ दिन के अंदर समस्त आक्रांत देश रिक्त कर देना था; परंतु वह इतने ही से संतुष्ट न था।

क्योंकि किसी प्रकार की दुविधा अथवा अनिश्चय में रह जाना सर्वथा उसके स्वभाव के विरुद्ध था। अतएव, उसने दूसरी शर्त लगाई—"मित्र राष्ट्र, राइन के उस पार, जर्मनी स्थित तीन प्रमुख पुलों पर अधिकार कर लें" ताकि संधि की बात चीत असफल होने की दशा में सफलता पूर्वक आक्रमण करके जर्मनी को दबाया जा सके। तीसरी शर्त में वह एक पग और आगे बढ़ा—"राइन के पश्चिम प्रांतों पर मित्र राष्ट्र का अधिकार हो ताकि युद्ध का हर्जाना वसूल करने के लिये पर्याप्त सुविधा और साखी (जमानत) हो सके।

१६ ता० को उसने क्लैमाँशो को एक महत्व पूर्ण पत्र लिख कर पूछा था—"हर्जाना वसूल हो जाने के पश्चात राइन प्रांतो की क्या दशा होगी? क्या वह स्थायी रूप से हमारे अधिकार में रहेंगे या किसी 'निरापेक्षी' सरकार की स्थापना करनी होगी?" इन प्रश्नों से स्पष्ट हो जाता है कि फाक जर्मनी और फ्रान्स के मध्य एक सबल 'रोक' खड़ी कर देना चाहता था। वास्तव में फाक का मुख्य लक्ष्य यही था कि जर्मनी पुनः फ्रांस पर आक्रमण करने के लिये निर्विरोध न छोड़ दिया जाय और नहीं कोई ऐसी परिस्थिति खड़ी हो जाय जिससे मित्र राष्ट्र की शर्तें लागू करने में बाधा उत्पन्न हो।

इन शर्तों का निर्माण ही सिद्ध करता है कि फाक कोई सरल सैनिक नहीं, अपितु, रणभूमि से परे, वह मैचीवेली के समान गूढ़ नीतिज्ञ, शासकीय व्यवस्था का ज्ञाता और राजनीतिज्ञ था। फाक के पत्र ने प्रकट कर दिया कि उसको सैन्य शर्तों के लिये मित्र राष्ट्र के उद्देश्यों से परिचित होना आवश्यक था। यथार्थवादी फाक भली भाँति समझता था कि रण युक्तियों का राजनीतिपर अटल स्तंभ है। परन्तु अभाग्यवश क्लैमाँशो को

शंका हुई कि फाक राजनीति पर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहता था, फलतः, एक सप्ताह के पश्चात उत्तर देते हुये, उसने फाक को लिखा—आप सरकार के केवल सैन्य सलाहकार हैं और वह भी सरकारी इच्छानुसार स्वीकृत और अस्वीकृत हो सकती थी"। फाक ने प्रत्युत्तर में लिखा—"मुझे आपके वैधानिक नियमों की शिक्षा नहीं चाहिये। मैंने सामान्य बुद्धि के आधार पर ही आपको लिखा था; शांति युद्ध का बौद्धिक परिणाम है अतएव मैं स्वभावतः जानना चाहता था कि सरकार के शांति संबंधी विचार क्या हैं ताकि मैं भी उसी अनुसार अपना कार्य क्रम बनाता।...युद्ध और संधि—एक को दूसरे से पृथक् बताना मूर्खता होगी; दोनों एक दूसरे के अन्योन्याश्रित अङ्ग हैं, बस इससे अधिक नहीं।.."

क्लेमाँशो की फटकार फाक को हतोत्साह न कर सकी। उसने कहा—"लोहे पर उसी समय चोट करना चाहिये जब कि वह लाल ही हो।...यदि फ्रांस चाहता है कि राइन प्रांत को प्रशिया से पृथक कर दिया जाय तो संधि शर्तों की उसी प्रकार रचना करनी होगी।"

क्लेमाँशो (प्रधान मंत्री) से निराश होकर उसने प्वायङ्केयर (अध्यक्ष) की शरण ली, उसने यहाँ तक कहा कि "राइ प्रांत बिना संधि हुई तो मुझे एक रात भी नींद नहीं आयेगी।" "अध्यक्ष ने उसे विश्वास दिला कर संतुष्ट किया।

फाक ने संधि संबंधी वादविवाद के सिलसिले में आगे चलकर एक इतिहासिक उत्तर दिया था—"परिणाम पर पहुँचने के लिये युद्ध करना पड़ता है; यदि जर्मनी ने हमारी शर्तों के अनुसार संधि की तो हमें परिणामों पर प्रभुत्व होगा

और भविष्य में पुनः एक बूंद भी रक्त बहाने की आवश्यकता न होगी।" परंतु शोक है उस दूरदर्शी सैनिक की शर्तें मानवता तथा राजनीति के नाम पर अपूर्ण ही छोड़ दी गयी और आज संसार एक बार पुनः महानरमेध की यातनायें भोग रहा है।

❋ ❋ ❋ ❋

फाक ने ११ नवम्बर को जर्मनी द्वारा फ्रांस की १८७० ई० वाली पराजय का गर्व पूर्वक प्रतिकार किया। परंतु उस असहाय स्थिति में भी जर्मन प्रतिनिधि ने चेतावनी दी थी—"७ करोड़ प्राणियों का राष्ट्र परास्त हो जाय, परन्तु मर नहीं सकता।" निसंदेह हम स्वीकार करते हैं कि वह सात करोड़ वाला राष्ट्र एक बार पुनः निर्दयता पूर्वक सजीव हो उठा है।

जर्मनी के हस्ताक्षर के पश्चात पत्रादि क्रमाँशो को देते हुये फाक ने कहा—"मेरा कार्य समाप्त हुआ अब आपका कार्य प्रारम्भ होता है।"

अवश्य, उस देश भक्त सैनिक ने अपना कार्य राष्ट्रीय सम्मान के साथ समाप्त किया था। उसकी प्रतिज्ञा पूरी और स्वप्न साक्षात हुआ। यह बात दूसरी है कि स्वयं स्वतंत्रता के भूखे प्राणी ने दूसरे के स्वातंत्र्य अपहरण का आत्म दोष न देखा; फाक वास्तव में एक समय एक ही बात को देखता था,—वह आततायी को परास्त करके स्वदेश को दासता से मुक्त कर रहा था; ४० वर्ष पूर्व छिने हुये उसके प्रांत उसे वापस मिल रहे थे। यही कारण है कि आल्सेस-लोरेन को वापस लेकर उनकी सुरक्षा के लिये राइन को दूसरा आलसेस-लोरेन बना देनेमें उसे तनिक भी संकोच न हुआ।

❋ ❋ ❋ ❋

संधि में देर-दार देख कर फाक अशांत हो उठा था ; उसे राष्ट्र संघ अथवा 'हुक्मी-देश' में तनिक भी विश्वास न था। वह कहता था जर्मनी की सैन्य संख्या या शस्त्र शक्ति सीमित नहीं की जा सकती जैसे इङ्गलैण्ड में कोयले की उपज का माप-तौल निश्चित कर देना असंभव है। राइन प्रांत पर प्रभुत्व के सिवा वह अन्य किसी शर्त को व्यर्थ समझता था। उसका कहना था—"राइन प्रांत पर अधिकार बिना जर्मनी पुनः उसी प्रकार आक्रमण का प्रयत्न करेगा मानो वह परास्त नहीं विजय हुआ है।" वास्तव में वह शीघ्र अति शीघ्र दकियानूसी धारा से बचकर सुदृढ़ संधि कर लेना चाहता था क्यों कि उसे भय था कि बेल्जियन सेनाओं के समान ही उसकी वर्षों की थकी हुई सेनायें भी कहीं ऊब कर विद्रोह पूर्वक स्वयं निःशस्त्र न हो जायें।

❀ ❀ ❀ ❀

फाक की विवक्षित शर्तों में जर्मनी को न बाँधा गया, जिसके लिये उसने आत्म ग्लानि के साथ कहा—"अङ्गरेज़ी षड्यंत्र के प्रभाव में अमेरिका ने भी मेरी इच्छा का विरोध किया है।" उसका मत था कि—"जर्मनी के एक बार परास्त होते ही इङ्गलैण्ड ने अपनी परम्परा गत नीति की शरण ली है—युरोप में शक्ति समतुलन के निमित्त विजयी (अर्थात् फ्राँस) के विरुद्ध खड़ा होना ताकि वह (फ्राँस) स्वयं इङ्गलैण्ड के विरुद्ध न खड़ा हो जाय।......एँग्लो-अमेरिकन गुट बंदी को रोकने के लिये हमें समस्त शक्ति लगा देना चाहिये था।..." सो न हुआ और इसके लिये सरकार तथा सैन्य समुदाय ने क्रेमाँशो की नम्रता को उत्तर दायी ठहराया। समस्या इतनी कटु होती गयी कि फाक

और क्लेमाँशो जैसे दो देश भक्तों में पारस्परिक मत भेद उत्पन्न हो गया क्योंकि दोनों अटल आत्माभिमानी थे। ठीक है, फाक उतना ही बड़ा सेनापति था जितना बड़ा क्लेमाँशो प्रधान मंत्री ; यदि फाक राजनैतिक और शासकीय ग्रन्थियों का अधिकारी न था तो क्लेमाँशो को भी किसी सैन्य पराकाष्ठा के अयोग्य ही समझना चाहिये, परंतु बात तो यह थी कि जिस विजय में फाक की साकार प्रतिमा विराजमान थी, उसी को लेकर दूसरे, उसे पूछे बिना ही, संधि की आयोजना करें—इस वैधानिक विडंबना से फाक का हृदय स्वभावतः टूट गया।

कुछ लोगों ने फाक के इङ्गलैण्ड पर दोषारोपण का वर्तमान परिस्थितियों से तुलना करते हुये इङ्गलैण्ड और फ्राँस की मैत्री को राजनैतिक की अपेक्षा जातीय बंधन के रूप में स्वीकार करने से इन्कार कर दिया है। उन्हों ने इसमें भौगोलिक संबंध से अधिक महत्व देना श्रेयस्कर नहीं समझा इस इतिहासिक दलील के विरुद्ध कुछ लोगों ने फाक से असम्मति प्रकट करते हुये अङ्गरेजी और अमेरिकन लोकमत की ओर ध्यान आकर्षित करके उसका नैतिक विरोध करने की भी चेष्टा की थी परंतु खेद है कि उन्होंने इस प्रकार फाक के पैतृक हृदय की गहराई को हठात ढंकने का प्रयत्न किया था। "एक स्वतंत्र राष्ट्र (फ्राँस) १५-२० लाख प्राणों की आहुति और अपार राष्ट्रीय सम्पदा को स्वाहा करके भी मैत्री और राजनैतिक समझौतों के भरोसे पुनः अपने आततायी पड़ोसी के भय से घुटते रहना कब स्वीकार कर सकता था?" फाक की शर्तों का यही निचोड़ था। इसी बात को उसने स्वयं और भी स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है—"हम

देश द्रोह के अपराधी होंगे क्योंकि प्रजा कभी नहीं समझ सकती कि विजय का अर्थ केवल दिवाला है।"

अतएव, फाक ने कटिबद्ध होकर अंतिम क्षण तक वार्साइ संधि का विरोध किया क्यों कि वह आगामी संतान पर दर्शा देना चाहता था कि "कर्तव्य पालन में उसने सारे उपाय समाप्त कर दिये और उस अप्रिय संधि में उसका लेश मात्र भी हाथ न था।"

और आज, वही वार्साइ संधि जिसमें फाक को न तो रुचि थी, न ही निर्माण श्रेय, कच्चे धागे के समान तोड़ी जा चुकी है।

फाक का ऋण मित्र राष्ट्र के सिर पर पुकार रहा है!

(९)

सन् १९१९ ई० समाप्त भी न हो पाया कि फाक की भविष्य वाणी साक्षात होने लगी। अमेरिकन सरकार ने वार्साइ संधि को अस्वीकार कर दिया। परिणामतः उसका आत्मरक्षक मूल्य नष्ट हो गया।

फाक को विशेष चिंता तो उस समय हुई जब जर्मनी संधि शर्तों विशेषतः निःशस्त्रीकरण संबंधी की पूर्ति में ढील-ढाल करने लगा। इधर मित्र राष्ट्र अपनी सेनायें इतनी तीव्र गति से विसंगठित करने लगे थे कि जर्मनी को भरपूर वशीभूत रखते हुये शर्तों को पूरी करा लेने में भी शंका होने लगी।

* * * *

परिणामतः, फाक को राजनीतिज्ञों से घृणा हो चली थी। उसने लायड जार्ज के संबंध में लिखा है—वह विचारों को कुर्ता-पाजामा के समान बदल देता है।. ···न जाने क्यों इङ्गलैण्ड ने ऐसे मनुष्य को भाग्य डोर सौंप रक्खी है? यदि उसका वश चले तो वह सारे युरोप को बोलशेविक बना दे।"

वास्तव में फाक को बोलशेविज्म से विरोध था। जब रूस की क्रांतिकारी सेना ने १६२० ई० में पोलैण्ड पर आक्रमण किया तो दशा बड़ी शोचनीय थी। लायडजार्ज ने फाक से पूछा—"क्या आप पोलैण्ड जाकर दशा को सुधार सकते हैं?" फाक ने संपूर्ण कार्य स्वातंत्र्य बिना जाने से इन्कार कर दिया।

बोलशेविक सेना की विजय देख कर फाक को चिंता हुई क्यों कि उसे भय था कि पोलैण्ड जीतने के पश्चात जर्मनी से संपर्क स्थापित करते हुये बोलशेविक फ्रांस के लिये भी निर्भय का कारण बन सकते थे। यही कारण है कि वार्सा में रूसी पराजय का समाचार सुन कर फाक को विशेष हर्ष हुआ था।

* * * *

१६२१ ई० में इङ्गलैण्ड की खानों में भयकर हड़ताल आरम्भ हुई। विवशतः विलसन को बाहर से सेनाओं के वापस बुलाने की आवश्यकता हुई। फाक ने उन्हें सहर्ष लौटा दिया। कुछ लोगों ने इसमें "मित्र की सहायता" से भी अधिक गूढ़ अर्थ ढूँढने का प्रयत्न किया है; उनका कहना है कि फाक को भय था कि जर्मनी और रूस के समान इङ्गलैण्ड में भी बोलशेविक विचार प्रभुत्व न स्थापित कर

लें। अतएव वह विलसन की सहायता के साथ ही हड़-तालियों के दमन का साधन एकत्रित करने देने में बाधक नहीं होना चाहता था। परंतु ऐसे अनुदार विचार के लिये स्वतंत्र कल्पना के अतिरिक्त कोई अन्य आधार नहीं।

❋ ❋ ❋ ❋

युद्ध के पश्चात ही जर्मनी में प्रजातंत्र की स्थापना हुई थी। १६२४ ई० में लूडन्डर्फ (भूत पूर्व प्रमुख सेनापति) पर हिटलर के विद्रोह में भाग लेने के लिये मुक़दमा चला। उस समय फाक ने कहा था—जर्मनी चीते के समान अपने धब्बे को नहीं मिटा सकता...मुझे तो यही शंका है कि प्रजा तंत्र सुरक्षित भी रहेगा या नहीं; रह भी जाय तो जर्मनी अपने शक्ति के मद से रिक्त नहीं हो सकता और अवसर पाते ही वह पुनः आक्रमण पर उतर आयेगा।...अतएव उसको सदा दुर्बल रखने में ही हित है।"

परन्तु साथ ही साथ प्रत्यक्ष अनुभवों ने उसे अधिकाधिक व्यावहारिक बना दिया था; १६२१ ई० में हर्जाने की किस्त चुकाने में जर्मनी को असफल देख कर मांग प्रस्तुत की गयी कि बर्लिन पर अधिकार कर लिया जाय" तो फाकने नक़शेपर उंगली रखते हुये कहा था—"मंज़िल दूर है"। वह बर्लिन पर अधिकार कर लेने की योग्यता रखता था परंतु इस कार्य क्रम में २—३ नयी सेनाएँ खड़ी करने की आवश्यकता थी। ४॥ वर्ष के युद्ध के उपरांत पुनः सेनायें खड़ी करना राष्ट्रीय अशांति की सूचक थी, विशेषतः जब कि बर्लिन पर अधिकार कर लेने के उपरांत भी हर्जाना वसूल हो जाने का निश्चय न था।

बात वहीं छोड़ दी गयी।

युद्ध की दुर्दशा को देखते हुये उसने बार बार कहा था—युरोप की परिस्थितियां बदल चुकी हैं; हमें एक नये शासन विधान की आवश्यकता है। पुरानी नींव पर नयी भीत खड़ी करना उसी प्रकार मूर्खता है जैसे घोड़ा गाड़ी में मोटर लगा कर उसे मोटर कार बताना...”।

❁ ❁ ❁ ❁

युद्ध की विभीषिका को देख कर वह स्वभावतः शाँति का उपासक बन गया था, परंतु उस शांति की ज़मानत में वह अब भी सैन्य उपाय प्रस्तुत कर रहा था,—वह जन्मगत सैनिक था, शांति की स्थापना भी उसने सेना द्वारा ही जाना था।

❁ ❁ ❁ ❁

सीमांत सुरक्षा का उपाय फाक की इच्छानुसार न हुआ था, अतएव उसने छोटे छोटे देशों के संयोग से उनकी संभावी शक्ति को शत्रु के विरोध में संगठित करके फ्रांस के लिये एक रक्षक भीत खड़ी करनी चाहता था,—जेकोस्लावेकिया युगोस्लाविया तथा पोलैण्ड की गुटबंदी उसी चेष्टा का फल था।

❁ ❁ ❁ ❁

संधि के परिणाम स्वरूप नव उद्भूत देशों के सीमा निर्माण के लिये एक समिति स्थापित हुई थी। फाक ने दुखद परिहास के साथ उस संबंध में लिखा था—“दशा-दयनीय है क्यों कि यहां जेनरलकी अपेक्षा राजनीतिज्ञ अधिक हैं और उन्हें युरोप के पुनर्निर्माण का भार सौंप दिया गया है।”

❁ ❁ ❁ ❁

फाक ने अपने जीवन का अंतिम समय साहित्यिक रचनाओं में व्यतीत किया है,—अपनी आत्म कथा और देवी जोन का जीवन चरित्र, उसके दो मुख्य प्रयास कहे जा सकते हैं।

धीरे धीरे वह पूर्ण अहिंसात्मक होता जा रहा था, यहां तक कि चिड़ियों के शिकार से भी वह दुखी हो जाता।

वह अब रचनात्मक कार्यों की ओर अधिक झुकने लगा था। वह जब कहता है कि मैं मृत्यु के पश्चात ऐसी वस्तु छोड़ जाना चाहता हूं जो स्थायी और ठोस हों" तो उसके हृदय का चित्र स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है।

फाक सदा सैन-संकेत द्वारा बात करता ; लोगों ने सत्य ही कहा है कि वह "विचारते समय देखता है" इसी लिये कहा जा सकता है कि "वह उसी पर विचार सकता था जिसे वह देखता था, अर्थात् उसने जो भी सीखा केवल प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा और उन्हीं के आधार पर वह अपने विचारों में संशोधन और परिवर्द्धन भी कर लेता था।" केवल इस एक चरित्र वर्णन के आधार पर हम फाक के समस्त कार्य और वैचारिक विविधता का सुन्दर सामञ्जस्य कर सकते हैं।

* * * *

२० मार्च १६२६ ई० को वह वीर सैनिक इस मृत्यु लोक को शून्य कर गया। परंतु संसार में जब जब युद्ध होगा इतिहास फाक का नाम एक बार अवश्य पुकारेंगे।